फिर महानंदा बेसिन : बाढ़, बाँध व राज्यनीति

पंकज कुमार झा
दिनेश कुमार मिश्र

भीख नय हमरा निदान चाही
बाढ़क स्थायी समाधान चाही
बाढ़ जेना आबै छै होय छै कटाव
बाढ़ उपरांत होय छै जल-जमाव
बाँध नय हमरा नदीक प्रवाह चाही
बाढ़क स्थायी समाधान चाही[1]

भूमिका

दुनिया के प्रमुख बाढ़ प्रभावित देशों में बांग्लादेश के बाद भारत का स्थान है। राष्ट्रीय बाढ़ आयोग के अनुसार, देश की लगभग 40 मिलियन हेक्टेयर भूमि व कुल आबादी का 1/8 वाँ हिस्सा बाढ़ प्रभावित है (आरबीए 1980)। अकादमिक दुनिया में बाढ़ को देखने के दो प्रमुख नज़रिये या ज्ञानमीमांसा है – पहला, राज्य प्रेरित हाइड्रोलॉजिकल नज़रिया व ज्ञानमीमांसा, जिसकी मान्यता है कि विकासवादी राज्य के लिए बड़े बाँध, नदी व बाढ़ नियंत्रण की परियोजनाएँ मंदिर-मस्जिद तुल्य हैं।[2] अतएव, राज्य के आधुनिकीकरण, विकास-प्रगति और बाढ़ नियंत्रण, प्रबंधन के लिए *हाई डैम*, तटबंध और आपदा प्रबंधन नीति अनिवार्य हैं (धवन 1989; एनडीएमसी 2005; रंगाचारी 2010)। गोया कि भारत में बाँध निर्माण के प्रति विशेष आग्रह व अतिमोह इसी नज़रिये से प्रेरित है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि *नैशनल रजिस्टर ऑफ़ लार्ज डैम* (2019) की माने तो भारत में अब तक 5334 बड़े बाँध निर्मित हैं, जबकि 411 बड़े बाँध निर्माणाधीन हैं (एनआरएलडी 2019)।

---

[1] यह मैथिली गीत महानंदा बेसिन स्थित कटिहार ज़िले में काम कर रहे एक सिविल सोसाइटी – पुनर्वास संघर्ष समति – के द्वारा अक्सर बाढ़ के समय स्थानीय सरकार व प्रशासनिक व्यवस्था का विरोध करते हुए गाया जाता रहा है. शब्दार्थ: *नय = नहीं, आबै = आना, होय = होना, छै = है, बाढ़क = बाढ़ का.*

[2] पंडित जवाहर लाल नेहरू ने 1954 में भाखड़ा नांगल के उद्घाटन के समय यह कहा था, विस्तार से देखें सत्यजीत सिंह (1997), *टेमिंग द वाटर, द पॉलिटिकल इकॉनॉमी ऑफ़ लार्ज़ डैम इन इंडिया*, ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

हाइड्रोलॉजिकल नज़रिये से बिल्कुल विपरीत एक दूसरा ऩजरिया है जिसे *लिविंग विद् फ़्लड* (बाढ़ के साथ जीना) कहते हैं, जिसका मानना है कि बाढ़ परंपरा और संस्कृति से अटूट रूप से जुड़ी हुई है, इसलिए बाढ़ नियंत्रण के स्थान पर बाढ़ के साथ जीना महत्त्वपूर्ण व अनिवार्य है (मिश्र 2008; मिश्र 2001 2008)।

ऐसे में यह प्रस्तावित शोध लेख चार प्रमुख मान्यताओं पर आधारित है – पहला, भारत में बाढ़ संबंधी अकादमिक व पत्रकारिता संबंधी शोधपत्र व पर्चों का सरोकार बिहार के कोसी क्षेत्र के बाढ़ तक सीमित रहा है। जबकि उत्तर बिहार की अन्य नदियाँ – मसलन बागमती, महानंदा और कमला बलान के इलाक़े भी बाढ़-प्रभावित हैं। ऐसे में यह लेख उत्तर बिहार की महानंदा बेसिन क्षेत्र की बाढ़, तटबंध व बाढ़ नियंत्रण संबंधी परियोजना का गंभीर अवलोकन करता है। दूसरा, यह लेख महानंदा बेसिन क्षेत्र में दिनेश मिश्र (1994-1999) व पंकज कुमार झा (2016) के द्वारा पूर्व में किए गए अकादमिक शोध कार्य को रिविज़िट करता है, जिसका मुख्य उद्देश्य ज़मीन में आये बदलावों व नई चुनौतियों की पड़ताल करना है। तीसरा, बाढ़ संबंधी राज्य प्रेरित ज्ञानमीमांसा और लोकनीति बड़े बाँध को बाढ़ नियंत्रण का अंतिम समाधान मानती है, जबकि ज़मीन पर गुज़र बसर कर रहे स्थानीय लोग-बाग की ज्ञानमीमांसा व समझ कुछ और है। ऐसे में यह लेख दोनों प्रकार की ज्ञानमीमांसाओं व नज़रियों के मध्य संवाद स्थापित करते हुए एक वैकल्पिक बाढ़ नीति की संभावनाओं को तलाशता है। चौथा, प्रस्तावित अकादमिक लेख में पद्धति के रूप में मात्रात्मक व गुणात्मक दोनों शोध पद्धतियों का प्रयोग करके अकादमिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

I. महानंदा नदी और बाढ़ का इतिहास

महानंदा उत्तर बिहार के पूर्वी क्षेत्र में प्रवाहित होने वाली गंगा की अंतिम सहायक नदी है (मिश्र 1994; त्रिपाठी 2003; हेमंत 2010)। इस नदी का उद्गम पश्चिम बंगाल के दार्जीलिंग ज़िले के करसियांग से 6 किलोमीटर उत्तर में हिमालय पर्वतमाला में चिमले के पास है, जहाँ से यह नदी 2062 मीटर की ऊँचाई से गंगा तक अपनी 376 किमी लंबी यात्रा शुरू करती है (मिश्र 1994-17; झा 2016)। कंकई से संगम के बाद महानंदा बरही-गुआहाटी राष्ट्रीय मार्ग 31 को बाघझोर के समीप गुज़रते हुए बागडोब तक आती है, जहाँ इसकी धारा दो भागों में बँट जाती है। बागडोब से दक्षिण की ओर बहने वाली धारा को झौआ शाखा कहते हैं, इसी धारा से होकर महानंदा का अधिकांश जल प्रवाह होता है। झौआ शाखा झौआ, सिकटिया, प्राणपुर, लाभा, सिंघिया, गोविंदपुर होते हुए कटिहार ज़िले के चौकिया पहाड़पुर में गंगा मिलती है। महत्त्वपूर्ण है कि सिकटिया के पास इसमें आगे चलकर दाहिने तट पर पनार नदी आकर मिलती है। यह शाखा आगे चलकर कटिहार बारसोई रेल लाइन को झौआ के पास तथा कटिहार को कटिहार-मालदा रेल लाइन को लाभा पर पार करती है। महानंदा की झौआ शाखा से एक अन्य सहायक नदी घसिया, लाभा के नीचे आकर मिलती है। यहाँ से महानंदा

की झौआ शाखा पश्चिम बंगाल के मालदा ज़िले में प्रवेश करती है और सुरमारा के पास गंगा नदी से संगम करती है।[3]

बागडोब पर महानंदा की दूसरी बाईं शाखा जो कि कटिहार के पास बारसोई से मुड़ती है बारसोई शाखा कहलाती है, तथा एक लूप के माध्यम से पश्चिम बंगाल में प्रवेश करती है। बाबा कोला, शिवकोला, मानाकोला, मेची, चेंगा, श्रीमाती, सुघानी, पनार, नागर, कुलिक आदि इसकी महत्त्वपूर्ण सहायक धाराएँ हैं। बारसोई के नीचे यह धारा भी दो भागों में बँट जाती है। सिलीगुड़ी के पास मैदान में उतरने के बाद यह नदी क़रीब समतल पर ही बहती है। महानंदा नदी की झौआ शाखा का भूमि ढलान जहाँ 10 सेमी प्रति किलोमीटर है वहीं बारसोई शाखा वाले क्षेत्र का ढलान 15 सेमी प्रति किलोमीटर के क़रीब है। ज़मीन के प्राय: समतल होने के कारण बरसात के मौसम में नदी का पानी आसानी से छलकता है और यह नदी कटिहार ज़िले को जलमग्न कर जलजमाव की स्थिति पैदा कर देती है। कोसी की छाड़न धाराएँ जैसे कारी कोसी और बरंडी भी जलजमाव को बढ़ाती है (मिश्र 1999 2013)।

ग़ौरतलब है कि महानंदा का कुल जलग्रहण क्षेत्र 24,753 वर्ग किमी है, जिसमें से 5293 वर्ग किमी नेपाल में, 6677 वर्ग किमी पश्चिम बंगाल में, 7957 वर्ग किमी बिहार में तथा बाक़ी बांग्लादेश में पड़ता है। महानंदा की सहायक धाराओं की यह ख़ासियत है कि उनके न सिर्फ़ रास्ते बदलते रहे हैं बल्कि उनके नाम भी उसी तरह बदलते रहते हैं। जैसे पनार नदी के अनेक नाम हैं जैसे, पनार, परमान, कदवा, रीगा, कंकर, फुलहर आदि। जैसे-जैसे वे स्थान बदलती हैं नदियों के नाम भी बदलते रहते हैं। इसी तरह बकरा नदी का नाम भी बकरा, कतुआ धार या देवनी हो जाता है। इन नदियों की धाराओं का विभाजन होता रहता है, और उनसे होकर गुज़रने वाले जल प्रवाह की मात्रा में परिवर्तन होता रहता है और उसी तरीक़े से उनका महत्त्व भी घटता-बढ़ता रहता है (त्रिपाठी 1977: 434-480)।

ग़ौरतलब है कि औपनिवेशिक काल में महानंदा नदी के प्रवाह संबंधी सबसे पहला प्रयास 1773 में जेम्स रेनेल नाम के एक सैन्य इंजीनियर ने किया। इसके बाद डॉ. फ़्रांसिस बुकानन हैमिल्टन (1809-10), रॉबर्ट मॉन्टगुमरी मार्टिन (1838) और डब्ल्यू.डब्ल्यू.हंटर (1877) ने भी इस नदी के प्रवाह का वर्णन किया। फ़्रांसिस बुकानन (1809-10) ने महानंदा नदी के प्रवाह पथ और सहायक नदियों के बारे में तो बहुत कुछ लिखा है परंतु वे नदी में आने वाली बाढ़ के बारे में मौन रहे हैं। वहीं रॉबर्ट मॉन्टगुमरी मार्टिन (1838) ने भी महानंदा में आने वाली बाढ़ के संदर्भ में जानकारी नहीं दी। दोनों के स्त्रोतों को देखें तो इन दोनों को महानंदा की बाढ़ से संबंधित इतनी ही जानकारी थी कि बाढ़ के समय महानंदा और उसकी सहायक नदियों पर बड़ी-बड़ी नावें चलाई जाती थीं। डब्ल्यू.डब्ल्यू.हंटर ने भी महानंदा के बाढ़ का कोई उल्लेख नहीं किया। शायद इसका कारण यह भी रहा हो कि कोसी पूर्णिया (अब कटिहार) के समीप बहती थी और कोसी की बाढ़ के आगे महानंदा की बात कहीं दबकर रह गई। उसके बाद के

[3] दिनेश कुमार मिश्रा (1994), *बंदिनी महानंदा,* समता प्रकाशन पटना.

कई लेखकों मसलन, शिलिंगफ़ोर्ड (1895), चार्ल्स इलियट (1895), या डब्ल्यू.ए.इंग्लिश (1909) ने भी बाढ़ की बात नहीं की।

बहरहाल पूर्णिया गज़ेटियर (1911) में पहली बार महानंदा की बाढ़ की छोटी चर्चा करते हुए लिखा गया कि हाल के वर्षों में सबसे गंभीर जल प्लावन 1906 में हुआ था जब कोसी और गंगा में एक साथ बाढ़ आई और इसी समय महानंदा में भी पानी चढ़ा हुआ था (मैली 1911)। महत्त्वपूर्ण है कि देश के नीति नियंताओं ने भी इस दौर में महानंदा की बाढ़ का कोई विशेष उल्लेख नहीं किया। 1937 के बहुचर्चित पटना बाढ़ सम्मेलन में देश के नामचीन राजनेताओं, सिविल इंजीनियरों व समाजसेवियों ने शिरकत की थी परंतु एक बार भी इसमें महानंदा की बाढ़ का नाम नहीं लिया गया (2006)। सन् 1942 में पी.सी. रॉयचौधरी के द्वारा तैयार की गई उत्तर बिहार की बाढ़ संबंधी रिपोर्ट में पूर्णिया ज़िले की सौरा, पनार, कारी कोसी आदि का उल्लेख कोसी की धारा के रूप में किया गया, परंतु इसमें भी महानंदा की तबाही का कोई उल्लेख नहीं मिलता है। महत्त्वपूर्ण है कि पूर्णिया गज़ेटियर (1963) के अनुसार, 1948 में पूरा बिहार बाढ़ की चपेट में था तब भी तत्कालीन पूर्णिया (वर्तमान कटिहार) के मनिहारी और बरारी थानों में ही बाढ़ का असर पड़ा था और वह भी गंगा के कारण बाढ़ आई थी (रॉयचौधरी 1963)। 1949 में महानंदा के बाढ़ का थोड़ा-सा उल्लेख फणीश्वरनाथ रेणु ने किया, 'उस बार महानंदा की बाढ़ से घिरे बापसी थाना के एक गाँव में हम पहुँचे। हमारी नाव पर रिलीफ़ डॉक्टर साहब भी थे। गाँव के कई बीमारों को नाव पर चढ़ाकर कैंप में ले जाता था' (रेणु 1977: 28)। सन् 1953 में एक बार फिर बिहार एक भीषण बाढ़ की चपेट में था परंतु उत्तर बिहार के बाक़ी ज़िलों के मुक़ाबले पूर्णिया में बाढ़ से तबाही कम हुई थी (वही, 224)। 1955 में महानंदा की बाढ़ का प्रभाव बारसोई, ठाकुरगंज, किशनगंज, बहादुरगंज व कटिहार थानों तक सीमित था। इस बार महानंदा, मेची, कंकई, पनार और परमान नदी के कारण बाढ़ इस इलाक़े में आई थी।[4] इसके बाद 1956 में इस इलाक़े में आई बाढ़ से कटिहार सब डिवीज़न में कटिहार, मनिहारी, आज़मनगर, कदवा, बारसोई, बरारी और कोढ़ा थानों पर इसका असर पड़ा था।[5] इसके बाद 1958 और 1961 में महानंदा में बाढ़ की कोई ख़बर नहीं आई। लेकिन इसके बाद 1963 में बिहार विधान सभा में कटिहार के स्थानीय नेताओं ने यह मामला उठाया कि पश्चिम बंगाल सरकार महानंदा नदी के बंगाल में पड़ने वाले इलाक़े में तटबंध बनाने जा रही है, जिससे कटिहार सहित बिहार का इलाक़ा बाढ़ से प्रभावित होगा। यहीं महानंदा बाढ़ नियंत्रण परियोजना की आधारशिला रखी जाने लगी।

---

[4] इस वर्ष आई बाढ़ में रिपोर्टों के अनुसार, ज़्यादातर नुक़सान फ़सल का हुआ, जानमाल का कोई विशेष नुक़सान नहीं हुआ. विस्तार से देखें, मिश्र (1994) व माथारनी (1955).

[5] बाढ़ का पानी पूर्णिया ज़िले के सदर, किशनगंज और कटिहार सब-डिवीज़नों के 431 गाँवों में घुस गया था.

II. महानंदा बाढ़ परियोजना का इतिहास[6] और निष्पादन

कटिहार ज़िले में 1906[7], 1956[8] एवं 1963[9] की बाढ़ की त्रासदी को रोकने को लिए बिहार व पश्चिम बंगाल के मुख्य अभियंताओं, केंद्रीय जल व ऊर्जा आयोगों के अधिकारियों की विस्तृत बैठक के उपरांत बिहार सरकार द्वारा योजना का एक प्रस्ताव तैयार किया गया जो इस प्रकार था –

1. कटिहार के रेलवे बाँध को शुरू करके मनिहारी के परित्यक्त रेलवे बाँध तक कारी कोसी नदी के पूर्वी तट पर तटबंधों का निर्माण किया जाए तथा तटबंधों पर 2 मीटर का फ़्री बोर्ड रखा जाए
2. कारी कोसी के पश्चिम किनारे पर भी तटबंध बनाया जाए और इसे गंगा नदी पर बने काढ़ागोला तटबंध से जोड़ दिया जाए।
3. महानंदा के पश्चिम छोर पर छाजा हाट से लेकर चौकिया पहाड़पुर तक (जहाँ यह गंगा नदी से संगम करती है) तटबंध बनाया जाए।
4. महानंदा के पूर्वी किनारे पर बागडोब से दिल्ली दीवान गंज (पश्चिम बंगाल की सीमा) तक तटबंध बनाया जाए और इससे 1.50 मीटर का फ़्री बोर्ड रखा जाए।
5. महानंदा की बारसोई शाखा पर बागडोब से लेकर कुशीदह (पश्चिम बंगाल की सीमा) तक तटबंध बनाया जाए।
6. गंगा नदी के उत्तरी तट पर चौकिया पहाड़पुर से लेकर टोपरा तक तटबंध बनाया जाए जिससे कि 1.2 मीटर का फ़्री बोर्ड रखा जाए।

---

[6] महानंदा परियोजना की शुरुआत की एक ख़ास वजह यह भी थी कि पूर्णिया (वर्तमान) के स्थानीय प्रतिनिधियों ने विधान सभा में यह कहा कि पश्चिम बंगाल में महानंदा के किनारे 58 किमी लंबा, 3.66 किमी उँचा और 10 मी. चौड़ा तटबंध बनाया जा रहा है, इससे पश्चिम बंगाल के हरिश्चंद्रपुर और दूसरे गाँवों की बाढ़ से रक्षा होगी वहीं कटिहार प्रमंडल के प्राणपुर और आज़मनगर प्रखंड में पड़ने वाले गाँवों में भयावह बाढ़ आएगी. ग़ौरतलब है कि मलियोर बाँध परियोजना के तहत वास्तव में बंगाल में फुलहर नदी (स्थानीय लोग महानंदा नदी को इसी नाम से जानते हैं) के बाएँ किनारे में एक बाँध बनाया गया जिससे दाहिने किनारे में जो बिहार का पूर्णिया ज़िला (अब कटिहार) है, वहाँ बाढ़ के ख़तरे को देखते हुए दाहिने किनारे पर तटबंध बनाने संबंधी परियोजना की शुरुआत करने की आवश्यकता है.

[7] अंग्रेज लेखकों ने इस क्षेत्र में आने वाली बाढ़ की व्याख्या वैसे तो बहुत की है, परंतु महानंदा की बाढ़ का ज़िक्र 1906 में पहली बार आया। 1906 में पहली बार गंगा के स्तर में बढ़ोतरी के साथ-साथ महानंदा के जलस्तर में बढ़ोतरी की ख़बर आई (ओ. मैली 1980).

[8] स्वतंत्रता उपरांत 1956 में कटिहार, मनिहारी, आज़मनगर, कदवा, करनदिघी, बरारी और कोढ़ा थानों में बाढ़ आई और बाढ़ का पानी पूर्णिया ज़िले (उस समय के पूर्णिया ज़िले में कटिहार, पूर्णिया, अररिया, किशनगंज शामिल थे) के 431 गाँवों में घुस गया.

[9] मार्च 1963 में बिहार विधान सभा में एक सत्र के दौरान श्री युवराज सिंह ने जो तात्कालिक पूर्णिया का प्रतिनिधित्व कर रहे थे, सदन को सूचित किया कि पश्चिम बंगाल सरकार ने अपनी तरफ़ से महानंदा पर तटबंध बनाना शुरू कर दिया है, जिससे महानंदा नदी का पानी तत्कालीन दक्षिण पूर्णिया (वर्तमान कटिहार) ज़िला की तरफ़ से बहना शुरू कर देगा और इससे बाढ़ की स्थिति और भयावह हो जाएगी.

चित्र-1
महानंदा परियोजना का मानचित्र

स्रोत: बंदिनी महानंदा, पृ. 66

महत्त्वपूर्ण है कि इस परियोजना में यह भी कहा गया कि महानंदा के दोनों तटबंधों के बीच 1830 मीटर का फ़ासला रखा जाए जिससे यह तटबंध प्रणाली पचास वर्षों में आने वाली बाढ़ के चक्र को सँभाल सके। इस योजना के तहत गंगा नदी पर मात्र 1.20 मीटर फ़्री बोर्ड इसलिए रखा गया क्योंकि इस नदी के दक्षिणी छोर पर तटबंधों का प्रस्ताव नहीं था और यह नदी बहने के लिए स्वतंत्र थी। कालांतर में बरंडी नदी को भी इस योजना में शामिल कर लिया गया और गंगा का तटबंध चौकिया पहाड़पुर से गंगा-बरंडी के संगम तक बढ़ा दिया गया।

बहरहाल कटिहार ज़िले (1982-2018) में बाढ़ से होने वाले नुक़सान के आँकड़ों के ज़रिये महानंदा बाढ़ नियंत्रण परियोजना के औचित्य को देखा जा सकता है। तालिका-1 में संगृहीत आँकड़े से निम्न बातें स्पष्ट हो रही हैं – क) कटिहार ज़िले के 36 वर्षों के आँकड़े में पंद्रह वर्ष भीषण बाढ़ से प्रभावित रहे हैं, जिसमें कुल 16 प्रखंड में से 10 या 10 से अधिक प्रखंड बाढ़ प्रभावित रहे हैं। ख) कटिहार में बाढ़ प्रभावित पंचायत के आँकड़ों को देखें तो सन् 1987 का वर्ष सर्वाधिक प्रलयकारी था, जिसमें 257 पंचायतें प्रभावित थीं जबकि हाल के वर्षों में (सन् 2017 में) 193 पंचायतें प्रभावित थीं। ग) कटिहार के बाढ़ प्रभावित गाँवों के आँकड़ों को देखें तो सन् 1987, 1995, 2013 एवं 2017 में हज़ार से अधिक गाँव बाढ़ प्रभावित रहे। घ) इन वर्षों में बाढ़ प्रभावित जनसंख्या का अवलोकन करें तो 1987 व 2017 का वर्ष सर्वाधिक प्रलयकारी रहा, जिसमें क्रमश: 15.60 और 19.90 लाख लोग प्रभावित हुए। च) फ़सल क्षति के लिहाज़ से देखें तो 2017 का वर्ष अत्यधिक नुक़सानदायक रहा जिसमें 8414.69 लाख रुपये की फ़सल की क्षति हुई। छ) मकान की संख्या और उसके क्षति के मूल्य को देखें तो 1987 का वर्ष अव्वल रहा जिसमें 1,65,654 मकान क्षतिग्रस्त रहे जिसमें 828,45 लाख की क्षति हुई। ज) मृतकों के आँकड़ों को और देखें तो सर्वाधिक सन् 1987 में था जिसमें – 1171 पशु और 74 मनुष्यों की मृत्यु हुई। झ) इसी तरह कटिहार में बाढ़ के कारण हुए सार्वजनिक संपत्ति के नुक़सान को देखें तो 1987 में यह सर्वाधिक रहा जिसमें क़रीब 11,395,96 लाख की संपत्ति का नुक़सान हुआ। ट) 1992 का वर्ष जहाँ कटिहार में सूखाग्रस्त घोषित रहा वहीं 2012 और 2018 बिहार आपदा प्रबंधन के आँकड़ों के हिसाब से कटिहार बाढ़ प्रभावित नहीं था।

तालिका-1
कटिहार ज़िला में बाढ़ से होने वाले नुक़सान (1982-2018)

						फसलों की क्षति		मकानों की क्षति		मृतकों की संख्या		
वर्ष	प्रभावित प्रखंडों की संख्या	प्रभावित पंचायतों की संख्या	प्रभावित गाँवों की संख्या	प्रभावित क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)	प्रभावित जनसंख्या (लाख)	क्षेत्रफल लाख हेक्टयर	क्षति का मूल्य लाख रु	संख्या	क्षति का मूल्य लाख में	पशु	मनुष्य	जनसंपत्ति की क्षति लाख रु
1982	5	47	97	0.28	1.04	0.20	600.00	13,200	132.00	-	-	उ०न०
1983	9	86	328	1.22	2.87	0.41	124.37	10,583	33.47	-	-	10.50
1984	11	184	761	2.08	6.22	1.09	1882.01	46.828	232.75	-	2	64.61
1985	7	87	290	0.69	1.94	0.15	80.10	3,482	3.28	-	-	उ०न०
1986	6	73	163	0.59	1.72	0.33	48.48	3,389	12.53	-	34	7.00
1987	11	257	1454	2.44	15.60	1.30	3474.75	1,65,654	828,45	1171	74	11,395.96
1988	11	164	713	1.46	6.72	0.65	1502.00	उ०न०	उ०न०	4	9	-
1989	9	99	273	0.76	1.20	0.26	285.55	1,153	11.18	-	4	22.40
1990	8	38	71	0.11	0.22	0.09	4.98	728	7.16	-	-	-
1991	11	169	760	1.27	7.70	0.60	231.60	1,711	27.25	7	11	0.50
1992	यह एक भयंकर सूखे का वर्ष था											
1993	5	38	83	0.72	1.62	0.17	69.13	906	4.32	-	-	22.00
1994	3	36	74	0.19	0.96	0.17	91.78	382	4.16	-	-	22.00
1995	16	176	1417	0.32	6.73	0.17	419.13	54,151	1,318.7	-	6	-
1996	12	111	414	0.88	4.19	0.57	21.40	10,734	205.87	61	11	171.15
1997	6	45	214	0.46	0.60	0.31	199.16	528	4.50	-	5	1.40
1998	16	174	680	3.08	7.86	0.52	4279.32	10,276	699.22	-	33	167.25
1999	7	103	361	2.83	0.37	0.17	1315.71	9,597	434.08	12	3	24.05
2000	5	70	276	0.04	3.41	0.11	87.04	705	211.52	-	9	15.00
2001	4	30	48	0.03	0.43	0.03	0.58	50	2.50	-	-	-
2002	10	115	572	0.73	6.98	0.40	749.00	9746	97.96	252	5	100.00
2003	15	175	759	1.28	9.33	0.76	1.96	16927	92.16	-	11	165.87
2004	16	163	684	1.850	6.90	0.60	1.089	2830	90.51	-	19	99.10
2005	5	42	142	0.290	1.33	0.18	117.45	1569	128.50	-	-	89
2006	5	5	5	0.005	-	-	-	70	1.5	-	-	-
2007	16	101	327	0.58	5.400	0.190	1741.58	2312	216.65	2	37	34.15
2008	15	132	497	0.51	6.75	0.30	3963.78	206	4.59	4	23	-
2009	8	9	11	0.07	0.16	0.003	0.10	70	1.05	-	2	-
2010	1	9	81	0.32	0.01	-	-	0	-	-	6	-
2011	5	51	235	0.15	4.48	0.18	56.02	0	3.5	-	2	-
2012	आपदा प्रबंधन विभाग (बिहार) के आंकड़े के अनुसार इस वर्ष कटिहार जिला बाढ़ प्रभावित नहीं है											
2013	10	138	1221	3.91	13.92	0.62	457.9	619	17.70	-	15	30.00
2014	5	20	57	0	0.26	-	-	-	0	-	-	-
2015	5	9	18	2.06	-	-	-	-	-	-	1	-
2016	12	167	824	0.20	11.32	0.36	2798.2	1733	71.92	-	20	40.00
2017	16	193	1266	0.6223	19.99	-	8414.69	64285	60226	22	74	13.83
2018	आपदा प्रबंधन विभाग (बिहार) के आंकड़े के अनुसार इस वर्ष कटिहार जिला बाढ़ प्रभावित नहीं है											

(स्रोत – बिहार सरकार के आपदा प्रबंधन विभाग, पटना के आँकड़े पर आधारित)

III. दिहाड़ी मज़दूर में तब्दील हुए स्थानीय किसान

महानंदा बाढ़ परियोजना की त्रासदी आज शोध स्थल पर साफ़ देखी जा सकती है। दिनेश मिश्र की 1994 में प्रकाशित किताब *बंदिनी महानंदा* और 1999 में *ईपीडब्ल्यू* में प्रकाशित लेख 'फ़्लड प्रोजेक्शन दैट नेवर वॉज़ : केस ऑफ़ महानंदा बेसिन ऑफ़ नार्थ बिहार' में महानंदा बेसिन में जल-जमाव की समस्या को कन्त लाल मंडल के मार्फ़त कुछ इस तरह व्यक्त किया गया है :

> तटबंध बनने के पहले धान और जूट मुख्य फ़सल थी। पिता ने अपनी मेहनत से 50 हेक्टेयर ज़मीन ख़रीदी थी, जो कि तटबंध के भेंट चढ़ गई। मेरा खेत अब हो गया है रेगिस्तान और सारा दिन उसमें घूमते-घूमते मैं हो गया हूँ ऊँट। मैं आदमी कहाँ बचा हूँ। इसी ज़मीन से मेरे बाबा ने चावल पैदा किया, मेरे पिता जी ने गेहूँ और मैं इस पर ककड़ी और फूट बोऊँगा। हमारे लिए यह तटबंध नहीं मृत्युबंद है।

आज 25 वर्ष बाद जब हम इलाक़े में पुन: जाते हैं तो हमें कन्त लाल मंडल तो नहीं मिले, उनका देहावसान हो गया है परंतु उनका पूरा परिवार आज दिहाड़ी मज़दूर बन गया है। गाँव सिकटिया में रहने वाले स्वर्गीय कन्त लाल मंडल के सुपुत्र राजू मंडल[10] (30) के अनुसार,

चित्र-2
पहली तस्वीर में कन्त लाल मंडल मध्य में, दूसरे में राजू मंडल

'2015 में लंबी बीमारी के बाद उनके पिता कन्त लाल मंडल का निधन हो गया। पिता जी ने आपको बताया था, आज उससे और बदतर स्थिति हमारे परिवार की हो गई है हमारे दादा के समय में तटबंध नहीं था, पूरे इलाक़े में बहुत खुशहाली थी, हमारी आर्थिक स्थिति भी काफ़ी अच्छी थी। पूरे इलाक़े में हमारे परिवार का नाम था। मेरे दादा प्रत्येक महीने पूर्णिमा के दिन

[10] राजू मंडल की शारीरिक स्थिति बहुत दुर्बल थी, और वह बाप-दादा के समय को याद करके भावुक हो जाते थे. वह बार-बार बोल रहे थे, इस तटबंध ने ना जाने कितने राजाओं को रंक बना दिया है (निजी साक्षात्कार जून-जुलाई 2018).

गाँव के लोगों के लिए भोज का आयोजन करते थे। हमारे यहाँ आधे दर्जन नौकर थे। पिता जी के समय से ही खेतीबाड़ी की स्थिति बिगड़ने लगी थी। घर में अब नौकर चाकर नहीं थे, क्योंकि उनका वेतन देना बूते के बाहर हो गया था। आज स्थिति और बदतर हो गई है। हमारी खेती-किसानी सब चौपट हो गई है, सब महानंदा नदी में विलीन हो गया और जो कुछ खेत बाढ़ के बाद ऊपर निकला वह बालूचर (बंजर) हो गया। जिसके घर इतने नौकर चाकर सेवा के लिए थे वो अब ख़ुद दूसरे का नौकर बन गया है। मैं और मेरा परिवार (पत्नी) दूसरे के खेतों में मज़दूरी करते हैं। मुझे इस बात की फ़िक्र होने लगी है कि मेरा बेटा क्या करेगा। उसके लायक़ तो एक मुट्ठी ज़मीन भी नहीं बचेगी। इस बाढ़ की लीला ने हमें पूरी तरह से लील लिया है।... जो धन्ना सेठ हुआ करता था वह अब दिहाड़ी मज़दूर बन गया है।[11]

पहले 'असम-कलकत्ता' अब 'दिल्ली-पंजाब' मज़दूरी के लिए जाते हैं

बाढ़ प्रभावित इलाक़े में लोग-बाग हालात से विवश होकर पलायन करते रहे हैं। महानंदा बेसिन स्थित कटिहार ज़िले से स्थानीय लोग-बाग पहले असम के धुबरी, गुवाहाटी और कलकत्ता मज़दूरी करने जाते थे। बंदिनी महानंदा (1994) पुस्तक में उल्लिखित एक महिला रेमो देवी से 25 वर्ष उपरांत इस यात्रा में फिर एक बार मुलाक़ात हुई। बंदिनी महानंदा (1994) में आज़मनगर प्रखंड स्थित सोलकंदा गाँव निवासी रेमो देवी[12] की कहानी को कुछ यूँ बयाँ किया गया है –

चित्र-3

पहले में रेमो देवी व बच्चे, दूसरे में पच्चीस साल बाद रेमो देवी अपने पति हरि सिंह के साथ
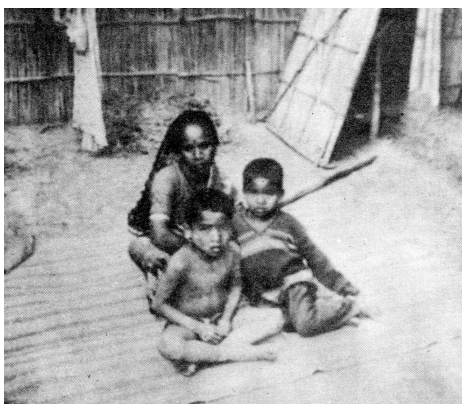
[11] बिहार स्थित महानंदा बेसिन इन पच्चीस वर्षों में कितना बदल गया है. अब तो लंबे समय से सुशासन वाली सरकार भी बिहार में आसीन है. महानंदा बेसिन की बाढ़ से जुड़ी समस्या नीतीश सरकार प्रायोजित गवर्नेंस के फ्रेमवर्क में क्यों नहीं है? क्या बाढ़ के संदर्भ में बिहार सरकार *क्राइसिस ऑफ़ गवर्नेबिलिटी* से गुज़र रही है?

[12] रेमो देवी क़रीब तीस साल बाद दिनेश मिश्र से मिली थी, वह दिनेश जी को ताना मारते हुए बोलीं – 'तब भी आए थे, फ़ोटो खींचकर चले गए और आज भी फ़ोटू खींचने केवल आए हैं, कुछ दाना-पानी देकर जाओ'. रेमो देवी के बोलते ही सभी लोग खिलखिलाकर हँस पड़े. फिर रेमो देवी ने बातचीत के बाद बहुत आग्रहपूर्वक चाय के लिए पूछा। यही एथ्नोग्राफ़िक शोध की कुंजी है, जब शोधकर्ता फ़ील्ड में लगातार भ्रमण करता है, वहाँ समय गुज़ारता है तो वहाँ के लोग-बाग से बहुत गहराई से जुड़ जाता है.

'तटबंध के बाहर रहने वाली एक महिला रेमो देवी के बारह से पाँच वर्ष के अपने चार बच्चे हैं। वह खेतों में मज़दूरी करने और जूट की चटाई बनाती है, जबकि उसका पति पहले गाँव में ही रहकर कुछ रोज़गार करते थे। भाइयों के बीच ज़मीन बँटने के बाद उपज कम होने लगी। तब हरि सिंह पहले आरा उसके बाद गुवाहाटी और पिछले चार-पाँच वर्षों से कलकत्ता थे' (मिश्र 1994)।

जब हमनें बंदिनी किताब (1994) में छपी उनकी पुरानी तस्वीर को दिखाया तो तस्वीर देखकर उसकी आँखें भर आई और वह ज़ोर से हँसते हुए अनायास बोल पड़ीं 'यह तो हमारा फ़ोटो है, पहले जुआन (जवान) थी अब बुढ़िया हो गई, हमारा चार बेटा-बेटी था। अब हम दादी बन गई हूँ'।

चेहरे को अपने साड़ी के पल्लू से पोंछते हुए उसने कहा

'पहले मेरा मर्द (पति) मज़दूरी करने असम और कलकत्ता जाते थे, वह जो कमा कर लाते थे, उससे हमलोग गुज़ारा करते थे, घर वाला (हरि सिंह) अब बीमार रहते हैं, इसलिए अब वह घर पर ही रहते हैं। बड़ा लड़का दिल्ली में राज मिस्त्री का काम करता है, और छोटा अभी घर पर है। छह महीने बाद बड़ा घर आ जाएगा और छोटा उसके जगह चला जाएगा। इसी तरह दोनों बेटा एक-एक करके बाहर जाता है, मज़दूरी करके लाता है तो हमारा घर परिवार चलता है। लेकिन हम यह जानना चाहते हैं कि आप लोग हमारा फोटू (फ़ोटो) खींचकर ले जाते हैं तो दिल्ली-पटना में नेता सब को क्यों नहीं दिखातें हैं। क्या हमलोग देश के 'वासी' नहीं हैं, हमलोग क्या हमेशा पलायन करेंगे यहाँ से। अगर हम बाहर नौकरी करने ना जाएँ तो भूखे पेट यहाँ मरेंगे'।[13]

नदियों के कटाव से जलप्लावित हो रहे गाँव

महानंदा बेसिन स्थित कटिहार ज़िले के चार प्रमुख प्रखंड – आज़मनगर, प्राणपुर, मनिहारी और अमदाबाद के दो दर्जन से अधिक गाँव सन् 2000 के बाद जलप्लावित हो गए। दिनेश मिश्र ने अपनी पुस्तक *बंदिनी महानंदा (1994)* में विस्तृत रूप से मनिहारी ब्लॉक स्थित मेदनीपुर[14] और आज़मनगर ब्लॉक स्थित सिकटिया गाँव के बाढ़-बाँध व खेती-किसानी का विस्तार से उल्लेख किया है। मेदिनीपुर के ऐतिहासिक पहलुओं को रेखांकित करते हुए कहा

[13] अपने विस्तृत फ़ील्डवर्क के दौरान शोध के लिए चयनित प्राणपुर प्रखंड स्थित गाँव जल्लाहरेरामपुर निवासी मीना कुमारी ने विस्तार से हमें बताया कि 'ग़रीबों के लिए पूरे सिस्टम में क्या कोई ठिकाना है; अगर प्रत्येक घर से जवान और बच्चे कमाने के लिए दिल्ली-पंजाब नहीं जाएँ तो प्रत्येक दिन भूख के मारे गाँव से लोगों की लाशें निकलेंगी'. विस्तार से पढ़ें, पंकज कुमार झा (2015), 'राज्य और बाढ़ नियंत्रण की राजनीति : बिहार स्थित कटिहार ज़िले के विशेष संदर्भ में', पीएचडी शोध (अप्रकाशित), राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय.

[14] ज्ञात हो कि मेदनीपुर गाँव में 1998 से ही कटाव शुरू हो गया था, इसके उपरांत 1999, 2000, में भी कटाव जारी रहा और अंतत: पूरा गाँव 2002 में पानी में विलीन हो गया.

गया है कि :

> यह वही गाँव है जहाँ सिराजुद्दौला और क्लाइव का 1757 का युद्ध हुआ था। सिराजुद्दौला की छावनी नवाबगंज में थी और उनके सेनापति मोहनलाल थे। दो सौ से अधिक अंग्रेज़ सिपाही बलदिया बाड़ी गाँव में रहते थे। अंग्रेज़ कमांडर क्लाइव ने मोहन लाल को हराने की हर संभव कोशिश की, और मेदनीपुर के निवासियों को बदले में मौवार की उपाधि प्रदान किया। मौवार वंश के लोग अभी भी इस गाँव में रहते हैं। क़रीब 400 साल पुराना यह गाँव जहाँ ठाकुर जी का भव्य मंदिर, राधा कृष्ण की मूर्ति, भगवान शंकर का शिवलिंग भी था। यह सब गंगा के प्रलयकारी कटाव में ध्वस्त हो गया। इस किताब में विस्तार से यह भी बताया गया है कि किस तरह से स्थानीय लोग बाँध को काटते हैं तथा स्थानीय प्रशासन उनकी मदद करता है (मिश्र 1994)।

जब हम मनिहारी ब्लॉक के पास स्थानीय लोगों से बातचीत कर रहे थे, तभी हमारी मुलाक़ात मेदनीपुर गाँव में रह चुके एक बुज़ुर्ग जनार्दन तिवारी से हुई।[15] उन्होंने भावुक होते हुए बताया 'हमारा मेदनीपुर गंगा के कटाव में समाप्त हो गया। उस समय को याद करके मैं पागल हो जाता हूँ हमारा घर-द्वार, खेती-बाड़ी, बाग़-बग़ीचा सब पानी के कटाव में विलीन हो गया... महीनों तक नहीं सो पाया था, पानी की कल-कल करती तेज़ धार बहुत डरावनी थी। मेरे परिवार की तरह लगभग 150 परिवार मेदनीपुर से 2003 में हुए जलकटाव से भागे थे। अब हम सब के लिए मेदनीपुर एक सपना जैसा ही तो है। पूरा गाँव आज गंगा की धारा में विलीन हो चुका है…और आज हमारा पूरा परिवार एक कमरे में किसी तरह से गुज़र बसर कर रहा है'।

बंदिनी महानंदा (1994) में बहुत विस्तार से आज़मनगर प्रखंड स्थित तटबंध के बीच फँसे *सिकटिया गाँव* की चर्चा की गई है।[16] किताब में सिकटिया को एक *अभिशप्त गाँव* के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसमें शिवनंदन मंडल, कन्त मंडल और परमानंद साह के कथनों के माध्यम से सिकटिया गाँव के किसानों की माली हालत को बयाँ किया गया है। (विस्तार से देखें पृ.89)। साथ ही इसमें कन्त लाल मंडल के माध्यम से यह कहा गया कि तटबंध के कारण उनकी खेती किसानी सब चौपट हो गई है। सभी किसान अब मज़दूर बन गए हैं। जल में गाँव के डूबने या बहने का उल्लेख करते हुए कन्त लाल मंडल ने कहा था – '1987 में कचौरा बह गया, 1991 में बेलवारी गया और अब अगले साल हमारा ही नंबर है'। (पृ.89)

पच्चीस साल बाद जब हम सिकटिया गाँव[17] के आसपास बेरिया गाँव पहुँचे और स्थानीय लोगों से सिकटिया तक पहुँचने का मार्ग पूछा तो, राहगीर मुस्ताक हुसैन (45) ने

---

[15] जनार्दन तिवारी हमसे बातचीत करते-करते मेरे सपनों का मेदनीपुर कहकर रोने लगे. पीएचडी शोध लिखने के दौरान किए गए अपने विस्तृत फ़ील्डवर्क के दौरान 4-5 मार्च 2012 को विस्तृत बातचीत की.

[16] बातचीत पर आधारित (जुलाई-अगस्त 2012).

[17] सिकटिया गाँव की विस्थापित जनसंख्या अब कंट्री साइड स्थित बेड़िया गाँव में निवास करती है (फ़ील्डवर्क पर आधारित 2012-13).

गंभीर स्वर में कहा 'सिकटिया अब बैरागी हो गया है'। क़रीब 100 से अधिक परिवार काफ़ी दिनों तक बाँध पर रहे। फिर पुलिस-प्रशासन ने उन्हें वहाँ से भगा दिया। अब हम ख़ानाबदोश की तरह इधर-उधर भटकते रहते हैं।

तालिका-2

सन् 2000 के उपरांत नदियों के कटाव से जलप्लावित गाँवों की सूची

क्रम	प्रखंड	जलप्लावित गाँव	नदी
1	आजमनगर	सोसाबाड़ी, बागछल्ला, पुराना बेलवाड़ी,मरही,गड़बधुवा,सिकटिया, धबौल, डुमरिया, रतनपुर,औलिया सोलकंधा,बालपुर,बेलंदा	महानंदा
2.	प्राणपुर	गिदौल जल्लाहरेरामपुर	महानंदा
3.	मनिहारी	गुआगाछी,कांटाकोश, मेदनीपुर वैजनाथपुर,घुरिहायी,कृष्णनगर केवाला,बुढ़ियाटीकर, मरगाहा	गंगा
4.	अमदाबाद	खट्टी गोपालपुर, नौरसिया	गंगा

स्रोत – स्थानीय स्रोतों से प्राप्त जानकारी के आधार पर तैयार

ज़मींदोज़ हो रही हैं इलाक़े की छोटी नदियाँ

महानंदा बेसिन की प्रमुख नदियों, मसलन महानंदा, गंगा और कोसी के अलावा अनेक छोटी नदियाँ प्रवाहित रहती हैं, जिससे बाढ़ का प्रबंधन किया जाता रहा है। परंतु हमने अपने फ़ील्ड वर्क के दौरान पाया कि इलाक़े की आधा दर्जन छोटी नदियाँ, मसलन कारी कोसी, कमला, परमान, सौरा, कप्तान, कजरा आदि विलुप्त होती जा रही हैं। बरंडी, नागर, रीगा जैसी नदियाँ भी बरसाती नदी बनकर सीमित हो गई हैं। वहीं भसना, लिबरी जैसी नदियाँ पूर्व में ही ज़मींदोज़ हो चुकी हैं। रिवर साइड निवासी नरेन्द्र नाथ ठाकुर (71) के अनुसार, 'इलाक़े की छोटी नदियाँ महानंदा, कोसी और गंगा की असली ताक़त रही हैं। हमारे गाँव में माणिकनाथ नदी बहुत ऐतिहासिक थी, ऐसी किंवदंती है कि नंदनपुर गाँव में एक राजा हुआ करता था जो काफ़ी अत्याचारी प्रवृत्ति का था जिसने माणिकनाथ नामक साधु को प्राणदंड दिया था। लोक मान्यता है कि इसके कुछ दिनों बाद ही महानंदा से एक पृथक धारा माणिकनाथ के नाम से निकली जिसने राजा का विनाश कर दिया। परंतु वह नदी भी अब विलुप्त हो गई है'।[18] ग़ौरतलब है कि

[18] अपने शोध के दौरान दिनांक 23.03.2013 को प्राप्त जानकारी के आधार पर उन्होंने यह भी बताया था कि माणिकनाथ नदी की केवल एक ही धारा अब बची हुई है, जिसमें स्थानीय लोगबाग़ गरमा धान की खेती करते हैं (देखें पंकज कुमार झा (2015), राज्य और बाढ़ नियंत्रण की राजनीति : बिहार के कटिहार ज़िले के विशेष संदर्भ में (अप्रकाशित), पीएचडी थीसिस, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय. वहीं 1.05.2020 को उनसे हुई बातचीत से यह ज्ञात हुआ कि वह अकेली बची धारा

बाढ़ प्रभावित इलाक़े में पोखर, तालाब और इन छोटी नदियों को कुशन (अधिक जल सोखने की क्षमता से युक्त माना जाता है, ताकि बाढ़ पर क़ाबू पाया जा सके) और *ज़मीन की किडनी* के रूप में देखा जाता है। स्थानीय अख़बारों से प्राप्त जानकारी के अनुसार, क्षेत्र की लगभग आधा दर्जन छोटी नदियों का अस्तित्व समाप्ति के कगार पर है। यही नदियाँ कभी बाढ़ के दौरान ढाल बनती थीं और बाढ़ का पानी इन नदियों से होकर निकल जाता था।[19] परंतु तालाबों व इन छोटी नदियों के सूखने से महानंदा बेसिन के इलाक़े में बाढ़ का ख़तरा लगातार बढ़ता जा रहा है। छोटी नदियों के लगातार विलुप्त होने के कारण की तरफ़ इशारा करते हुए स्थानीय नदी व पर्यावरण विशेषज्ञ प्रो. राजेन्द्र मंडल के अनुसार, इसके पीछे मूल कारण समाज का अपने पारंपरिक जल स्रोतों की अनदेखी करना है। लोगों ने अपनी बढ़ती ज़रूरतों की पूर्ति के लिए नदियों का भी शोषण करना शुरू कर दिया है। नदियों की पारंपरिक धाराओं को बाधित किया जा रहा है। इस पर आलीशान मकान खड़े किए जा रहे हैं। बढ़ती ज़रूरत व भौतिकतावादी वहशीपन ने हमें नदियों को मारने के लिए प्रेरित किया है, इसे *डाईंग विज़डम* की स्थिति कह सकते हैं।[20]

बदल रहा है खेती-किसानी का पैटर्न

आज महानंदा बेसिन की खेती-किसानी का पूरा पैटर्न आज बदल गया है। पी.सी. रॉयचौधरी (1963) ने *डिस्ट्रिक्ट गजेटियर ऑफ़ पूर्णिया*[21] में बताया कि 'इस इलाक़े में मूल रूप से अगहनी[22], भदही[23] और रबी[24] की खेतीबाड़ी क्रमश: 56 फ़ीसदी, 34 फ़ीसदी और 39

भी मृतप्राय हो चुकी है.

[19] नंदन कुमार झा (2019), 'सीमांचल में ज़मींदोज़ हो रही है नदियाँ, बढ़ रहा बाढ़ का ख़तरा', *दैनिक जागरण,* भागलपुर संस्करण, 27 जून : 4.

[20] व्यक्तिगत साक्षात्कार में प्रो. राजेन्द्र प्रसाद मंडल ने हमें यह भी बताया कि छोटी नदियों को कुंद करने में जलीय पौधे जलकुंभी की भी बहुत नकारात्मक भूमिका रही है. जलकुंभी और जलकच्चू इन दो प्रजातियों ने नदियों को पूरी तरह से पाट दिया है. इनकी जलग्रहण क्षमता अधिक होने और इनका फैलाव तेज़ी से होने के कारण नदियाँ गाद से भर गई हैं. नियमित रूप से साफ़-सफ़ाई का अभाव और उपेक्षाभाव के कारण नदियों का अस्तित्व ख़तरे में पड़ चुका है.

[21] इसमें यह भी बताया गया अगहनी धान की सत्तर क़िस्में, भदही धान की 32 क़िस्में और रबी (गेहूँ) की 40 क़िस्में उपलब्ध थीं.

[22] रॉयचौधरी अगहनी की खेती के बारे में विस्तार से बताते हैं कि मई महीने में अच्छी बारिश के बाद खेत को चार बार अच्छी तरह से जोतकर एक छोटी-सी ज़मीन के टुकड़े में बिचड़ा डाला जाता है, बारिश होने से मिट्टी नम हो जाती है, बार-बार अच्छी तरह से जोतने से मिट्टी अच्छी तरह से मिल जाती है पानी अंदर तक प्रवेश कर जाता है। उसके बाद ज़मीन के इस टुकड़े से अगहनी चारा निकालकर खेत में 9-9 इंच के अंतराल में रोपा जाता है इसलिए इसे *रोपा धान* कहते हैं. यदि मशीन या हाथों से छींटकर इसकी खेती करेंगे तो इसे *लतौन धान* कहते हैं. इसके बाद इसे नवंबर अंत और दिसंबर की शुरुआत में काटा जाता है. (रॉयचौधरी 1963).

[23] भदही धान के बारे में विस्तार से पूर्णिया गज़ेटियर में बताते हुए रॉयचौधरी कहते हैं कि पहली बारिश के बाद खेत को 10-12 बार जोता जाता है, उसके बाद अप्रैल-मई में छींटकर या मशीन से बीज खेत में डाला जाता है। जैसे ही पौधा 6 इंच लंबा होता है, फ़सलों की छँटाई की जाती है एवं ज़मीन को खरपतवार से बचाने के लिए कमौनी की जाती है। तैयार फ़सल को अगस्त-सितंबर में काटा जाता है, (देखें रॉयचौधरी 1963).

[24] रॉयचौधरी ने रबी फ़सल में विशेष रूप से गेहूँ के बारे में लिखा था कि यह पूर्णिया के पश्चिमी हिस्से में मध्यम भूमि पर

फ़ीसदी ज़मीन पर होती है। अगहनी समतल ऊँची ज़मीन पर उगाई जाती है, जबकि भदही ऊँची भूमि पर और रबी (गेहूँ) के लिए मध्यम ऊँचाई की मिट्टी की आवश्यकता होती है’। परंतु पिछले दस साल में इस इलाक़े की खेतीबाड़ी का पूरा पैटर्न बदल गया है। इस बदलते पैटर्न को निम्न आँकड़े से देखा जा सकता है :

उपरोक्त आँकड़े से प्रमुख विशेषताएँ निकल कर आती हैं – क) भूमि प्रयोग (लैंड यूज़) के नज़रिये से देखें तो 2012-13 तक चावल और गेहूँ का क्षेत्र बढ़ा है, उसके ठीक बाद इसमें गिरावट आई, वहीं 2013-14 से मकई के भूमि प्रयोग में ज़बरदस्त बढ़ोतरी हुई है। ख) उत्पादन का अर्थ है – भूमि प्रयोग और उत्पादकता (प्रोडक्टिविटी) का गुणनफल । आँकड़े बताते हैं कि 2013-14 के बाद धान-गेहूँ के उत्पादन में औसतन कमी आई है।[25] ग) उत्पादकता के दृष्टि से, 2012-13 तक धान-गेहूँ की उत्पादकता में बढ़ोतरी हुई परंतु 2013 के उपरांत औसतन इसमें कमी आई है वहीं इस दौरान मकई की उत्पादकता में बढ़ोतरी हुई है। घ) 2016-17 की तुलना में 2017-18 में बाढ़ के कारण कटिहार में चावल की उत्पादकता में कमी आई है। स्थानीय सूत्रों के अनुसार, बाढ़ के कारण धान पूरी तरह से बह गया और अक्टूबर में खेत पूरी तरह से ख़ाली हो गया। ड़) दिलचस्प है कि 2016-17 में गेंहूँ की उत्पादकता (2435) की तुलना में 2017-18 में बढ़ोतरी (2706) हुई। क्योंकि बाढ़ के कारण जब धान की फ़सल अक्टूबर तक नष्ट हो गई तो उसके बाद किसानों ने उसपर गेहूँ की खेती किया। च) महत्त्वपूर्ण है कि कुल मिलाकर हालाँकि धान के भूमि प्रयोग, उत्पादकता और उत्पादन में कटिहार ज़िले में बढ़ोतरी हुई है। फिर 2016-17 में मकई की उत्पादकता (10366) में 2017-18 (9002) में कमी आई, क्योंकि बाढ़ के कारण खरीफ़ मकई तो नष्ट हो गए परंतु रबी मकई का उत्पादन हुआ। क्षेत्र में पिछले दो वर्षों में हुए ओलावृष्टि से भी 2017-18 और 2018-19 में मकई की खेतीबाड़ी प्रभावित हुई है।

ग़ौरतलब है कि मूल रूप से भर्री गाँव[26] निवासी अर्थशास्त्री डॉ. अविनेन्द्र ठाकुर के अनुसार बाढ़ ग्रस्त इलाक़े में खेतीबाड़ी के लिए दो प्रकार की ज़मीन की उपलब्धता है क) *रहिका* और *नेमा*। रहिका उँची ज़मीन को कहते हैं जिसमें 2 फसलों की पैदावार वर्ष भर की जाती है। धान और उसके कटने के उपरांत मकई। जबकि नेमा ज़मीन निचली ज़मीन को कहते

उपजाया जाता था। (देखें रॉयचौधरी 1963).

[25] 2013 के बाद धान और गेहूँ के उत्पादन में कमी दो कारणों से हुई – पहला, धान और गेहूँ का भूमि प्रयोग (लैंड यूज़) कमी हुई और इसके साथ ही साथ प्रति हैक्टेयर/ प्रति एकड़ की कमी.

[26] कदवा प्रखंड स्थित भर्री पंचायत परंपरागत रूप से खेतीबाड़ी में संपन्न रहा है. जब बाँध व तटबंध नहीं बने थे, तब बाढ़ का पानी मुक्त रूप से इस इलाक़े में आता था और यहाँ के लोग धान-गेहूँ उपजाते थे. इससे पूरे इलाक़े में बहुत संपन्नता थी. लेकिन पिछले 8-10 वर्षों से गेहूँ से स्थानीय किसानों को कोई मुनाफ़ा नहीं हो रहा है. मज़दूरी के ख़र्च में भी वृद्धि हुई है. साथ ही साथ कटनी और तैयारी के वक़्त भी मज़दूरी की समस्या सामने आई है. इसके साथ ही बाँध बँधने से इलाक़े में जलजमाव की समस्या भी आने लगी. इसलिए अब इस इलाक़े में धान की खेती भी सीमित होती है, ज़रूरत के हिसाब से लोग गरमा किस्म की धान ज़रूर उपजाते हैं. जूट की खेती भी लगभग समाप्त हो गई है. ऐसे में भर्री गाँव के किसान पूरी तरह से मक्का की तरफ़ शिफ़्ट हो गए हैं.

हैं जिसमें पानी एक-दो महीने ठहरता है। ऐसी ज़मीन पर या तो केवल एक फ़सल (मकई) लगाई जाती है या फिर सरसों के साथ गरमा धान का सहयोजन इस प्रकार किया जाता है कि सरसों को अक्टूबर में बोया जाता है और फ़रवरी में काटा जाता है तभी गरमा लगाया जाता है और उसे भी मई में बाढ़ से पहले काट लिया जाता है। उन्होंने इस बात को भी जोड़ा कि अब इलाक़े की खेतीबाड़ी गेहूँ से मक्का[27] में पूरी तरह से शिफ़्ट हो गई है। पहले किसान अगहनी धान और गेहूँ उपजाते थे वहीं अब गरमा धान और मकई की खेती करते हैं।

बहरहाल फ़ील्डवर्क के दौरान भर्री गाँव निवासी सदानंद ने बताया कि पहले जब बाँध नहीं बँधा हुआ था तब बाढ़ का पानी आता था और 2-3 दिन में लौट जाता, वैसी स्थिति में यहाँ हमलोग तीन फ़सल करते थे। अप्रैल-मई में अगहनी का रोपा करते थे, और उसे अगहन (नवंबर-दिसंबर) में काट लेते थे, तभी खेत में खिसारी और मटर लगाते थे उसे माघ (जनवरी-फ़रवरी) में काटते थे और उसमें पटसन लगा देते थे जिसे अप्रैल-मई तक काटते थे। अगहनी का धान ग़रीबों के लिए बहुत फ़ायदेमंद होता था, इसमें कोई खाद बीज नहीं लगता था, बाढ़ के पानी में ही वह तैयार हो जाता था। परंतु 2010 में कचौड़ा बाँध बँधने के बाद स्थानीय किसानों ने अगहनी धान करना छोड़ दिया है, ऐसे में अब जलजमाव वाले नीची ज़मीन पर लोग-बाग *गरमा धान* ही उपजाते हैं।[28]

कंट्री साइड स्थित गाँव सगुनिया निवासी मो.नौशाद[29] के अनुसार, पिछले पाँच-सात वर्षों में किसानों को गरमा धान में भी लाभ बहुत कम हुआ है, गरमा धान बिना खाद-पानी के नहीं होता है, ऐसे में एक तो उससे उपज बहुत कम होती है दूसरी तरफ़ समय से पूर्व आने वाली बाढ़ (जून महीना जब गरमा धान की कटाई का समय होता है), गरमा को बहा कर ले जाती है। इसलिए 2013 के बाढ़ के समय कल्याणी-सिकोरना गाँव में एक किसान ने क़रीब 40-50 बीघा ज़मीन पर गरमा धान लगा था, सब बाढ़ के पानी में समाप्त हो गया और उससे आहत होकर किसान ने आत्महत्या कर ली।[30] स्पष्ट है कि अब महानंदा बेसिन के स्थानीय किसान अपने भोजन की ज़रूरत के हिसाब से ही गरमा और गेहूँ करते हैं जबकि व्यावसायिक नज़रिये से मक्का की खेती करने लगे हैं। आज़मनगर प्रखंड स्थित बेलवाड़ी गाँव निवासी माखन कुमार राय (27)[31] की मानों तो महानंदा बेसिन में किसान गेहूँ की खेती बिल्कुल ज़ीरो के

---

[27] ठाकुर व गाँव के अन्य लोगों से यह भी जानने को मिला कि यहाँ का मक्का बहुत व्यापक पैमाने पर बाहर सप्लाई होता है. मक्का का उपयोग कॉर्नफ्लेक्स, पोलट्री व सूअर पालन में होता है तथा उसे बांग्लादेश और म्यांमार तक भेजा जाता है. (बातचीत पर आधारित अप्रैल-मई 2020).

[28] बातचीत पर आधारित (दूरभाष से 1-2 मई, 2020).

[29] मो. नौशाद से 2013 में विस्तार से बात हुई थी, उन्होंने बताया कि बाँध बँधने के कारण कंट्री साइड में पर्याप्त पानी नहीं आता जिससे यहाँ के लोगों ने गेहूँ छोड़ दिया, गेहूँ में दानों की भी समस्या आ रही थी बिना दाना के गेहूँ घास-फूस के बराबर है. इसलिए लोगों ने अपना जीवन बचाने के लिए मक्का की खेती शुरू किया है. (विस्तार से देखें झा (2015), राज्य और बाढ़ नियंत्रण की राजनीति-बिहार के कटिहार ज़िले के विशेष संदर्भ में, (अप्रकाशित) पीएचडी थीसिस, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय : 218.

[30] बातचीत पर आधारित (दूरभाष से 5-6 मई, 2020).

बराबर करता है। मकई किसानों में खुशहाली लाता है, नक़दी फ़सल होने के कारण लोग-बाग तेज़ी से इसकी तरफ़ आकर्षित हुए हैं। 1 एकड़ ज़मीन पर क़रीब 50 क्विंटल तक मक्का की पैदावार हो जाती है और 1500-2000 रुपया प्रति क्विंटल आसानी से किसान को मिल जाता है। ऐसे में 75,000-100000 रुपये की कमाई किसान 1 एकड़ की ज़मीन पर कर लेता है।[32]

तालिका-2.1

कटिहार ज़िले में चावल, गेहूँ और मकई का क्षेत्र, उत्पादन और उत्पादकता (2009-2019)

	चावल			गेहूँ			मकई		
वर्ष	क्षेत्र	उत्पादन	उत्पादकता	क्षेत्र	उत्पादन	उत्पादकता	क्षेत्र	उत्पादन	उत्पादकता
2009-10	102	156.3	1526	35.2	65.3	1854	46.2	123.9	2682
2010-11	94	149.1	1571	30.3	92.6	3057	51.5	192.4	3733
2011-12	76	158.60	2069	37.3	108.90	2918	37.9	153.12	4036
2012-13	100	323.02	3207	36.4	121.67	3341	58.2	293.44	5041
2013-14	101	282.12	2793	36.6	116.9	3193	58.1	373.44	6419
2014-15	105	279.58	2639	39.4	69.87	1771	46.9	305.62	6510
2015-16	104	218.71	2098	35.4	92.44	2607	45.6	365.95	8025
2016-17	109	242.53	2207	7.5	18.45	2435	89.5	928.28	10366
2017-18	53.5	113.85	2128	28.2	76.45	2706	65.4	588.87	9002
2018-19	90.1	201.14	2232	23.4	69.26	2952	68.7	475.83	6927

स्रोत: बिहार सरकार द्वारा जारी आर्थिक सर्वे की रिपोर्ट के आधार पर तैयार

सिविल सोसाइटी का बदलता नैरेटिव

महानंदा बाढ़ नियंत्रण परियोजना के निर्माण कार्य के बाद सिविल सोसाइटी की तरफ़ से 1987 की बाढ़ के बाद ज़बरदस्त विरोध किया गया। महानंदा बेसिन के इलाक़े में 1987 में आई भीषण बाढ़ में सरकारी-प्रशासनिक लापरवाही के ख़िलाफ़ शुरू हुआ जनआंदोलन[33] का नेतृत्व *समता युवजन सभा* और *संपूर्ण क्रांति मंच* के सम्मिलित प्रयास से किया गया था

---

[31] माखन कुमार राय ने हमें विस्तार से बताया कि 1 एकड़ गेहूँ में जहाँ 10-11 क्विंटल गेहूँ की ही पैदावार हो रही है. कभी गेहूँ के पौधे में दाना नहीं आता तो कभी गेहूँ को चूहे खा जाते हैं. उसका बाज़ार मूल्य भी 1000-1200 रुपया है अर्थात् 1 एकड़ में किसान को 1000-12000 रुपया ही मिलता है.

[32] बातचीत पर आधारित फ़ील्डवर्क के दौरान 2012-13 और दूरभाष से बातचीत (मार्च-अप्रैल 2020).

[33] जल आंदोलन प्रमुख रूप से पानी से जुड़े पाँच मुद्दे अर्थात् बाढ़, सिंचाई, शुद्ध पेयजल, जल-जमाव और जलनिकासी के साथ गहराई से जुड़ा हुआ था. बाढ़ की समस्या और उसका स्थाई समाधान जल आंदोलन के स्थायी एजेंडा में शामिल था. इस इलाक़े के पानी में आयरन, आर्सेनिक की मात्रा अधिक थी. इसलिए शुद्ध जल को भी इसके अंतर्गत जोड़ा गया. जल-जमाव भी इस इलाक़े की प्रमुख समस्या के रूप में रही है, पहले यहाँ अगहनी की खेती होती थी उसका विनाश हो गया. अगहनी धान के साथ दलहन की खेती होती थी, वह भी चली गई. इसलिए जल जमाव व निकासी का मुद्दा भी जल आंदोलन में जुड़ा.

(मिश्र 1994)। इसके अंतर्गत क़रीब दस हज़ार लोगों ने 25-26 सितंबर, 1987, में कटिहार कचहरी का घेराव करते हुए सरकार के सामने रिलीफ़ के वितरण को फिर से शुरू करने; कचौड़ा बाँध टूटने की घटना की न्यायिक जाँच कराने एवं बाँध समस्या के स्थाई समाधान के लिए बागडोब को और अधिक चौड़ा और गहरा करने की माँग किया। लोगों का जनसैलाब इस आंदोलन व आंदोलनकारी के पक्ष में देखकर स्थानीय प्रशासन काफ़ी चिंतित हो गया था। प्रशासन इस आंदोलन को तोड़ना चाहता था, उसे अपने पक्ष में मिलाना चाहती थी। परंतु प्रदर्शनकारी सफल नहीं रहे। जलआंदोलन ने धीरे-धीरे और व्यापक रूप धारण कर लिया, इसके अंतर्गत बड़ी तादाद में जनसंपर्क सभाएँ और पदयात्राओं का दौर चला।[34] बाद के सालों में इस आंदोलन ने इलाक़े में बाढ़ व पानी से विभिन्न पहलुओं (शुद्ध जल, बाढ़, सिंचाई, जलजमाव आदि) पर आंदोलन तेज़ किया जिसमें लोगों की ज़बरदस्त सहभागिता देखी गई। हालाँकि यह आंदोलन आपसी विवाद व मतभेद के कारण अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं कर पाया, परंतु इस आंदोलन ने सिविल सोसाइटी की एक ऐसी तस्वीर को प्रस्तुत किया जो स्थानीय लोगों की आवाज़ को तटस्थता से प्रस्तुत कर रहा था।

आज रिविजिटिंग महानंदा के अंतर्गत जब हम शोध-स्थल का मुआयना करते हैं तो यह बात बिल्कुल साफ़ दिखाई पड़ती है कि पानी जैसे मुद्दों पर लड़ा गया जल आंदोलन जैसा सर्वव्यापी आंदोलन का आज अभाव है। इसके स्थान पर बाढ़ से जुड़े एकल मुद्दों पर ज़रूर दो-तीन सिविल सोसाइटी प्रयासरत् हैं। कटिहार स्थित कदवा ब्लॉक में सक्रिय *महानंदा बाँध रोको संघर्ष समिति* जहाँ इस इलाक़े में बाँध व तटबंध का सक्रिय विरोध कर रही है, वहीं दूसरी तरफ़ कटिहार के मनिहारी-अमदाबाद ब्लॉक में गंगा नदी के कटाव से पीड़ित परिवारों व विस्थापितों के मुद्दों पर *पुनर्वास संघर्ष समिति* अलग कहानी प्रस्तुत करती है। *महानंदा बाँध रोको संघर्ष समिति* इस इलाक़े में बाढ़ से तटबंध के कटाव वाले क्षेत्र में प्रशासन द्वारा पुन: बाँध बाँधने का विरोध कर रही है। कदवा स्थित कुम्हरी चौक में लगभग पाँच हज़ार की तादाद में इकट्ठा लोगों के साथ मिलकर जनसभा का नेतृत्व किया गया।[35] महत्त्वपूर्ण है कि महानंदा बाँध रोको संघर्ष समिति स्थानीय प्रशासन से निम्न माँग कर रही है – क) बागडौब की खुदाई की जाए ताकि महानंदा की बारसोई धारा जीवित हो जाए और झौआ के साथ-साथ बारसोई के मार्ग से पानी का गमन हो इससे दोनों ही धाराओं के बीच बराबर जल का बँटवारा होगा। ख) महानंदा और रीगा नदी के अंदर 25 किमी भू-भाग में फैले पानी के निकासी का एक मात्र मार्ग झौआ स्थित रेलपुल की लंबाई एवं चौड़ाई बढ़ाई जाए ताकि जल निकासी निरंतर हो सके। ग) बाढ़ प्रभावित क्षेत्र की प्रमुख नदियाँ कनकई, महानंदा, परवान और रीगा नदी में जमे हुए गाद की सफ़ाई कर नदी की गहराई बढ़ाई जाए। घ) झौआ से चाँदपुर होते हुए डमरुआ बाँधपुर तक तटबंध में

[34] इसके संदर्भ में विस्तृत जानकारी अपने डॉक्टोरल थीसिस वर्क के दौरन किए गए फ़ील्डवर्क में किशोर कुमार मंडल से की गई विस्तृत बातचीत के आधार पर प्राप्त हुआ. किशोर कुमार मंडल एक युवा के रूप में 1987 के जल आंदोलन में काफ़ी सक्रिय थे.

[35] नंदन कुमार झा (2018), 'खुले रहे तटबंध तो बचेगी जान', *दैनिक जागरण*, (भागलपुर संस्करण), 24 मई.

व्यापक स्तर पर स्लुईस गेट का निर्माण करवाया जाए जिससे बाढ़ आने पर स्लुईस गेट खुला रखकर इससे निकासी हो सके। ड़) बाँध के टूटे हुए भाग को यथावत् खुला रखा जाए।[36]

वहीं दूसरी तरफ़ मनिहारी-अमदाबाद में सक्रिय सिविल सोसाइटी *पुनर्वास संघर्ष समिति* 2010 से ही इस इलाक़े में अपनी माँगों को लेकर अडिग रही है। 2017 में आयी प्रलयकारी बाढ़ एवं गंगा नदी के कटाव से कारी कोसी बाँध पर विस्थापित पीड़ित हज़ारों लोगों की पर्याप्त राहत व पुनर्वास की माँग को ज़िला स्तर पर उठाते हुए पुनर्वास संघर्ष समिति ने जेल भरो आंदोलन का नेतृत्व भी किया। इस दौरान ज़िला प्रशासन के समक्ष निम्न माँगे रखी गईं[37] – क) गंगा नदी व महानंदा नदी के कटाव के कारण बेघर परिवार जो बाँधों, सड़कों व रेल की पटरियों के किनारे गुजर बसर कर रहे हैं उन्हें पुनर्वास हेतु घर बनाने के लिए बिहार सरकार द्वारा ज़मीन सीज (बिना एपीएल और बीपीएल के भेद के) किया जाए। ख) कुर्सेला से लेकर अमदाबाद तक गंगा नदी के कारण होने वाले कटाव को रोकने के लिए स्थाई समाधान किया जाए। ग) भूमिहीन विस्थापितों को अभियान बसेरा के तहत पुनर्वास करवाया जाए। घ) जब तक इन विस्थापितों का पुनर्वास नहीं हो जाता तब तक सड़कों और रेलवे लाइन किनारे से झोपड़ियों को नहीं तोड़ा जाए।

महत्त्वपूर्ण रूप से महत्त्वपूर्ण है कि महानंदा बेसिन के इलाक़े में बाढ़-बाँध के मुद्दे पर सिविल सोसाइटी के बदलते नैरेटिव को हम निम्न बिंदुओं में देख सकते हैं – क) पूर्व में

चित्र–4
कटिहार में 1987 में हुए जल आंदोलन

स्रोत: जल आंदोलन से जुड़े किशोर के निजी आर्काइव से प्राप्त

---

[36] इसके साथ ही साथ इसके द्वारा कई और माँगें की गईं जैसे प्रत्येक वर्ष बाढ़ से तबाह किसानों का कृषि-कर्ज़ माफ़ किया जाए, महानंदा के बाढ़ को नियंत्रित करने के लिए विशेषज्ञों की जाँच कमेटी नियुक्त थी, और बाँध के भीतर रीगा नदी जो बरसात के समय विकराल रूप धारण करती है, जो झौआ में महानंदा से मिलती है, उससे ठीक पहले कटे हुए तटबंध स्थल पर स्लुईस गेट का निर्माण किया जाए ताकि बाढ़ के समय उसे खोलकर आबादी को बचाया जा सके.

[37] इसे स्थानीय अख़बारों ने भी कवर किया था, विस्थापित परिवार में शामिल हज़ारों की संख्या में शामिल लोगों ने ज्ञापन सौंपते हुए कहा कि या तो हमें बसने के लिए ज़िला प्रशासन ज़मीन दे या फिर जेल भेजे.

सिविल सोसाइटी द्वारा किया गया आंदोलन (जल आंदोलन) व्यापक मुद्दे (बाढ़, शुद्ध पेयजल, सिंचाई, जल-जमाव) पर आधारित था जबकि आज सिविल सोसाइटी एकल मुद्दों पर आंदोलन कर रहे हैं (*महानंदा बाँध रोको संघर्ष समिति* जहाँ केवल बाँध के ख़िलाफ़ आंदोलनरत है वहीं पुनर्वास संघर्ष समिति, राहत और पुनर्वास के मुद्दों को बढ़ा रही है)। ख) पहले सिविल सोसाइटी स्थानीय राजनीति से पूरी तरह से तटस्थ और स्वतंत्र थी इसलिए उसके प्रति लोगों में एक ज़बरदस्त विश्वसनीयता थी जबकि वर्तमान में मौजूद सिविल सोसाइटी किसी न किसी राजनीतिक दल की विंग/शाखा की तरह कार्य करती है, ऐसे में इसकी विश्वसनीयता में गिरावट आई है।[38] तीसरा, पहले सिविल सोसाइटी के पास कुशल नेतृत्व व संगठनात्मक क्षमता थी परंतु आज के सिविल सोसाइटी के पास दोनों का अभाव देखा जा सकता है।[39] चौथा, पहले इलाक़े में कार्यरत सभी सिविल सोसाइटी के बीच आपसी एकता व तालमेल दिखाई पड़ती थी जबकि वर्तमान में इसका साफ़ अभाव देखा जा सकता है।

अप्रभावी आपदा प्रबंधन

राहत व पुनर्वास विभाग के जिम्मे पहले बाढ़ नियंत्रण होता था, परंतु सन् 2005 के आपदा प्रबंधन ऐक्ट के बाद यह ज़िम्मेदारी आपदा प्रबंधन विभाग पर आ गई है। नाम परिवर्तन देखकर ऐसा जान पड़ता है मानो इन विभागों की कार्यशैली बहुत सुधर गई हो। परंतु यदि कोई पूछे कि इनकी कार्यशैली में कितना बदलाव आया है तो इसका शायद ही कोई समुचित उत्तर दे पायेगा (मिश्र 2009)। बहरहाल रिविजिट महानंदा के सिलसिले में हम जब शोध फ़ील्ड पर जाते हैं तो देखते हैं कि अब आपदा प्रबंधन ऐक्ट 2005 व राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन नीति 2009 के अंतर्गत बाढ़ को एक 'आपदा' करार देते हुए उसके कुशल निवारण का दावा प्रस्तुत किया जाता है। महानंदा बेसिन के इलाक़े में आज़मनगर, प्राणपुर, कदवा, मनिहारी, अमदाबाद, बरारी प्रखंड में हजारों की तादाद में लोग-बाग बाढ़, नदियों से होने वाले कटाव के कारण विस्थापन की समस्या का सामना कर रहे हैं। (मिश्र 1994 1999; झा 2015 2020)। महानंदा बेसिन के बेलंदा गाँव (कदवा ब्लॉक) निवासी धनिया देवी (46) ने विस्थापन के दंश को इस रूप में व्यक्त किया है हमारा पूरा परिवार विस्थापित हो गया है। हमारा घर-द्वार, खेत-खलिहान सभी पानी में डूब गया। हमारे पास आजीविका का कोई और साधन नहीं है। कभी कभी सरकारी राहत सामग्री के तौर पर हमें चूड़ा-गुड़ मिल जाता है, परंतु अक्सर हमें भूखे सोना पड़ता है।

ग़ौर करने योग्य बात यह है कि विस्थापित लोग-बाग को अनेक समस्याओं से जूझना पड़ता है जैसे घर से विस्थापन, भूमि से विस्थापन, बेरोजगारी, हाशियाकरण, साथ असुरक्षा

[38] हमने देखा कि वर्तमान में कार्यरत बहुत सारी सिविल सोसाइटी इसे आधार बनाकर अपने विधानसभा क्षेत्र में वार्ड मेंबर व विधायक का चुनाव भी लड़ने की तैयारी में हैं.

[39] वर्तमान में मौजूद सिविल सोसाइटी कुशल नेतृत्व के अभाव में एक व्यवस्थित रोडमैप का अभाव है, यही कारण है कि न तो नियमित रूप से धरना-प्रदर्शन का ही आयोजन होता है और ना ही स्थानीय लोगों के लिए जागरूकता शिविर आदि का ही आयोजन होता है.

आदि जिसे मिशेल एम. कार्निया (2007) ने रेखांकित किया है। कार्निया द्वारा रेखांकित सभी समस्याओं में अपने शोध स्थल में हमने यह भी देखा है कि एक और समस्या दिखाई पड़ती है – वह है महिला की सुरक्षा का। विस्थापित परिवार में महिलाएँ काफ़ी असुरक्षित महसूस करती हैं उन्हें उसे असामाजिक तत्वों व पुलिस प्रशासन की प्रताड़ना का सामना करना होता है।

समग्र रूप से देखें,तो राज्य अपने पुलिस तंत्र व स्थानीय माफ़िया के सहयोग से बाँध पर अस्थायी रूप से रह रहे विस्थापित लोगों को खदेड़ता है, हाथापाई करती है एवं उनके अस्थाई निवास को तोड़ती है। यह ऐसा वास्तविक चेहरा है जो राज्य के आपदा प्रबंधन के दावों पर सवालिया निशान खड़ा करता है।

आपदा प्रबंधन से जुड़ा दूसरा प्रमुख मुद्दा *पुनर्वास* से जुड़ा है। बिहार आपदा प्रबंधन के अंतर्गत पुनर्वास संबंधी स्पष्ट प्रावधान करते हुए कहा गया है कि 'बाढ़ जैसी किसी आपदा से अगर कोई परिवार विस्थापित हुआ है तथा जो गरीबी रेखा के नीचे जीवन व्यतीत कर रहा है, उसका घर बाढ़ से क्षतिग्रस्त हुआ हो अथवा जलमग्न हो गया हो, उसकी पहचान सर्वप्रथम की जाए एवं उन्हें पुनर्वासित किया जाए। इसमें यह प्रावधान है कि प्रभावित परिवार को सरकारी ज़मीन से 4 डेसीमिल ज़मीन प्रदान किया जाए (आपदा प्रबंधन ऐक्ट 2005, बिहार सरकार; 2007)। फ़ील्ड वर्क के दौरान जल्लाहरेरामपुर गाँव की निवासी और स्व सहायता समूह में कार्यरत मीना देवी (55) के अनुसार, हमारे गाँव में 2008 की बाढ़ में क़रीब 40 घर जलप्लावित हो गए। तब से स्थानीय लोग बाँध पर बहुत मुश्किलातों में रहते हैं। 10 साल बाद भी हमें पुनर्वास की ज़मीन आवंटित नहीं की गई है। गाँव के विस्थापन व पुनर्वास के मुद्दों को लेकर लगातार ज़िला प्रशासन के दफ़्तर के चक्कर काटती रहती हूँ। एक दिन मुझे कलेक्टर साहब से मिलने का मौक़ा मिला उन्होंने मुझे डाँटते हुए कहा – आपको और कोई काम नहीं है घर में। आप हर दिन यहाँ क्यों चली आती हैं, क्या आप बाढ़ पीड़ितों के लिए मुक़दमा लड़ रही हैं। उन्होंने हमें बहुत हतोत्साहित किया। हम ऐसे प्रशासन की उम्मीद नहीं कर रहे थे।

महत्त्वपूर्ण बात है कि हमने अन्य लोगों से भी बात की, जिससे हमें यह जानकारी मिली कि केवल 20-25 परिवारों को पुनर्वास मिला। परंतु पुनर्वास केवल उन्हें ही मिला जो उच्च जाति के साथ तथा स्थानीय राजनेता व प्रशासन के बहुत क़रीबी थे। इससे साफ़ पता चलता है कि स्थानीय प्रशासन आम लोग-बाग के प्रति कितना अमानवीय और असंवेदनशील हो गया है। और बाढ़ की राजनीति में यह पक्ष बहुत ही अहम है।

बाढ़ प्रबंधन संबंधी तीसरा मुद्दा *राहत* से संबंधित है। राज्य सरकार आपदा प्रबंधन संबंधित इस नीति के तहत आपदा से प्रभावित प्रत्येक परिवार को 6000 रुपया राहत राशि के रूप में देने का प्रावधान है। वहीं जिस परिवार का घर पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से बाढ़ से प्रभावित हुआ है उसे 95,100 प्रति परिवार देने का प्रावधान किया गया है (आपदा प्रबंधन ऐक्ट, 2005)। परंतु फ़ील्ड वर्क के दौरान हमने देखा कि इस कार्य के वितरण में व्यापक धाँधली दिखाई पड़ती है।

राहत सामग्री के बँटवारे में स्थानीय पंचायती राज की संस्थाओं की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। ऐसे में गाँव के मुखिया, सरपंच व स्थानीय प्रशासन की मिलीभगत से भ्रष्टाचार और फलता-फूलता है। स्थानीय प्रशासन यानि बीडीओ व सीओ मुखिया, सरपंच व वॉर्ड सदस्य से राहत सामग्री के लिए अर्हत लोगों की सूची माँगते हैं। मुखिया व सरपंच स्थानीय लोगों से इसके बदले घूस माँगते हैं। आज़मनगर ब्लॉक निवासी माखन लाल राय (30) के अनुसार, इस सूची में नाम डलवाने के लिए मुखिया और सरपंच पीसी (परसेंटेज) माँगते हैं। वह कहते हैं कि उन्हें ही 6000 रुपये की राशि मिलेगी जो 500 रुपया देगा। जब हम इसका कारण पूछते हैं तो वह बोलते हैं कि 'अरे ये तो मुफ़्त का माल ही मिल रहा है तुमको। 500 दे दोगे तो क्या होगा।' बेलंदा निवासी सज्जन मंडल के अनुसार यदि आप घूस नहीं देंगे तो आपका नाम सूची से काट दिया जाता है भले ही आप क्यों न सबसे अधिक ज़रूरतमंद हों। और उनका नाम सूची में डाल दिया जाता है जिसने उन्हें घूस दिया है।

स्थानीय लोगों से बातचीत करने पर यह भी पता चला कि जो रपट आपदा प्रबंधन की राशि के बँटवारे, राहत व सामग्री के नाम पर तैयार की जाती है वह केवल रस्मआदायगी होती है। बहुत गुस्से में स्थानीय निवासी उदित कुमार (30) ने कहा कि 'ये बस सरकारी फ़ाइलों की पेट भरने के लिए बनाया जाता है'।

IV. वैकल्पिक बाढ़ नीति की ज़रूरत

महानंदा बेसिन में किए गए विस्तृत शोध व रिविजिट के आधार पर यह कहा जा सकता है कि बाढ़ संबंधित उपलब्ध परिप्रेक्ष्य अथवा ज्ञानमीमांसा से अलग एक वैकल्पिक बाढ़ नीति की आवश्यकता है। इस वैकल्पिक बाढ़ नीति की संकल्पना में स्थानीय ज्ञान व सहभागिता की अहम भूमिका है (चेंबर 1997 ; स्कॉट 1998 ; सेन 2000)। महत्त्वपूर्ण रूप से वैकल्पिक बाढ़ नीति की संकल्पना इस बात पर बल देती है कि राज्य द्वारा प्रेरित हाइड्रोलॉजिकल प्रविधि, बाढ़ नियंत्रण व प्रबंधन, आपदा प्रबंधन नीतियाँ इत्यादि बिना स्थानीय ज्ञान के अधूरी व एकांगी हैं। दूसरे शब्दों में, प्रस्तावित वैकल्पिक बाढ़ नीति की संकल्पना बाढ़, बाँध संबंधी सिविल इंजीनियरिंग समझबूझ व ज्ञानमीमांसा के साथ स्थानीय समझ व चिंतन के संवाद को परम आवश्यक बताता है। राज्य व लोग-बाग के ज्ञानमीमांसा में संवादहीनता को कोसी बाढ़ के समय रेखांकित करते हुए अनुपम मिश्र ने *सामयिक वार्ता (2008)* में प्रकाशित अपने लेख 'तैरने वाला समाज आज डूब रहा है' में कहते हैं कि 'कोसी बाढ़ के वक़्त राहत कार्य के लिए खाना बाँटने, खाने के पैकेट गिराने में जो हेलीकॉप्टरों का इस्तेमाल किया गया उसमें चौबीस करोड़ रुपये का ईंधन ख़र्च करके दो करोड़ रुपये की रोटी-सब्ज़ी बाँटी गई थी। ज़्यादा अच्छा यह नहीं होता कि इस इलाक़े में चौबीस करोड़ के हेलीकॉप्टरों के बदले बीस हज़ार नावें तैयार रखते और मछुआरे, नाविकों, मल्लाहों को इस कार्य से जोड़ते, जो नदियों की गोदी में पला-बढ़ा समाज है।' इससे कम

लागत में बेहतर राहत कार्यों का वितरण किया जा सकता था। ग़ौरतलब है कि वैकल्पिक बाढ़ नीति की संकल्पना की वैचारिक पृष्ठभूमि में विकासवादी साहित्य में विशेष दख़ल रखने वाले विद्वानों मसलन गैरेट हार्डिन[40] (1968), एलिनर ओस्ट्रम[41] (1990) व राबर्ट चेंबर[42] (1997) के विचार समाहित हैं।

इस प्रकार यह संकल्पना निम्नलिखित प्रमुख बिंदुओं को रेखांकित करती हैं – प्रथम, *बाढ़ नियंत्रण के स्थान पर बाढ़ प्रबंधन पर बल* – वैकल्पिक बाढ़ नीति की संकल्पना, अमेरिकी विद्वान फिलिप डब्ल्यू विलियम्स[43] के विचारों को आगे बढ़ाते हुए ऐसी मान्यता प्रस्तुत करती है कि पूर्ण रूप से बाढ़ नियंत्रण एक आदर्शवादी व कल्पनालौकिक सोच है, इसलिए इसके स्थान पर *बाढ़ प्रबंधन* पर बल दिया जाना चाहिए। बाढ़ प्रबंधन के अंतर्गत बाढ़ के साथ चलने वाली परिवहन प्रणाली, स्कूल व संचार प्रणाली को गतिमान करने पर बल दिया गया है। महत्त्वपूर्ण है कि उत्तर-औपनिवेशिक राज्य ने भी आज बाढ़ प्रबंधन पर विशेष फ़ोकस किया है, ऐसे में देखना लाज़िमी होगा कि राज्य द्वारा प्रेरित बाढ़ प्रबंधन की पूरी मुहिम में लोक सहभागिता व विकेन्द्रीकण की कितनी कोशिश की जाती है। क्योंकि बिना लोकसहभागिता के बाढ़ प्रबंधन संबंधी प्रयास एकांगी होगा। दूसरा, *छोटे तकनीक या इंटरमीडिएट तकनीक पर ख़ास जोर* – वैकल्पिक बाढ़ नीति की संकल्पना तकनीक विरोधी नहीं है वरन् ज़मीनी ज़रूरतों के अनुरूप बड़े तकनीक के स्थान पर छोटे तकनीक के प्रयोग की हिमायती है। महानंदा बेसिन के इलाक़े में विशेष रूप से नागरिक समाज व स्थानीय लोग रिवर साइड से कंट्री साइड की तरफ़ अतिरिक्त पानी के हस्तांतरण व जलजमाव की समस्या के रोकथाम के लिए तटबंधों पर स्लुईस गेट जैसे लघु तकनीक को अपनाने की माँग लगातार कर रहे हैं। ऐसे में वैकल्पिक बाढ़ नीति की संकल्पना में लघु तकनीक का विशेष स्थान है। तीसरा, *बाढ़ नियंत्रण संबंधी ग़ैर-संरचनात्मक उपायों मसलन, वॉटरशेड की रक्षा व उसे क़ायम रखना, कैचमेंट एरिया इम्प्रूवमेंट, बाढ़ पूर्व चेतावनी प्रणाली व फ़्लड फ़ोरकॉस्टिंग तकनीक पर बल* – वैकल्पिक बाढ़ नीति राज्य द्वारा सदैव से प्रोत्साहित संरचनात्मक उपायों के स्थान पर उपरोक्त ग़ैर-संरचनात्मक मानकों पर बल देता है। एवं वैश्विक स्तर पर इससे जुड़े सफल प्रयोगों को आत्मसात करने की भी बात करता है, ताकि बाढ़ से होने वाले भीषण नुक़सान को कम किया जा सके। चौथा, *वैकल्पिक बाढ़*

---

[40] गैरेट हार्डिन (1968) प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन पर राज्य के अत्यधिक नियंत्रण के धुर विरोधी माने जाते हैं.

[41] ओस्ट्रम का मानना है कि प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में स्थानीय समुदायों को अत्यधिक शक्ति प्रदान की जानी चाहिए. विस्तार से देखें (ओस्ट्रम 1990).

[42] राबर्ट चेंबर का विश्वास है कि विशिष्ट परिस्थितियों में संसाधनों के समुचित प्रयोग की सबसे बेहतर समझबूझ स्थानीय समाज को होती है, विस्तार से देखें (चेंबर 1997).

[43] फ़िलिप डब्ल्यू. विलियम्स (1999) ने अमेरिका में मिसिसिपी मिसौरी नदी में 1993 में आई बाढ़ के विशेष संदर्भ में बाढ़-नियंत्रण की सीमाओं को रेखांकित करते हुए कहा कि बाढ़ नियंत्रण पूर्ण रूप से संभव नहीं है, इसलिए इसके स्थान पर बाढ़ के पानी के उचित प्रबंधन पर फ़ोकस करना चाहिए.

नीति नवपरंपरावादी दृष्टिकोण को स्वीकारते हुए रिवाइवल ऑफ़ ड्राइंग विज़डम[44] की अवधारणा के अंतर्गत पोखर,[45] छोटी नदी,[46] तालाब जैसे परंपरागत जल स्त्रोतों व ज़नरे[47] जैसे सांस्कृतिक गीतों को पुन: जीवित करने पर बल देता है। पाँचवाँ, *वैकल्पिक बाढ़ नीति के अंतर्गत समावेशी आपदा प्रबंधन नीति की संभावनाओं को प्रोत्साहित करने पर ज़ोर दिया गया है।* 2005 के बाद बाढ़ को एक आपदा मानते हुए उसके प्रबंधन की ज़िम्मेदारी राज्य के ऊपर है। परंतु स्थानीय लोगों व स्थानीय ज्ञानमीमांसाओं की सहभागिता के बिना, आपदा प्रबंधन नीति को समावेशी नहीं बनाया जा सकता है। और जब तक यह समावेशी नहीं बनेगा तब तक बेहतर निष्पादन की उम्मीद करना बेमानी होगी।[48] समावेशी आपदा प्रबंधन के अंतर्गत बाढ़ के पूर्व, बाढ़ के दौरान व बाढ़ के उपरांत की प्रक्रियाओं में राज्य के साथ-साथ स्थानीय समूहों, सिविल सोसाइटी की समग्र सहभागिता होगी।

निष्कर्ष

स्पष्टत: महानंदा बेसिन के क्षेत्र में राज्य द्वारा प्रेरित हाइड्रोलॉजिकल नज़रिये या ज्ञानमीमांसा को विशेष महत्त्व दिये जाने के कारण ही यह इलाक़ा प्रलयकारी बाढ़ से प्रभावित रहा है। राज्य ने रणनीतिपूर्वक बाढ़ प्रबंधन संबंधी स्थानीय समझबूझ को *पुअर्स मैन विज़्डम* यानि ग़रीब गुरबों की बुद्धि क़रार देते हुए नज़रअंदाज़ किया है। फलत: दिनेश मिश्र (1994 1999) द्वारा महानंदा बेसिन के इलाक़े में किए गए शोध में जिन-जिन गाँवों की बाढ़ की कहानी को प्रस्तुत किया गया था, वह गाँव अब नदी में विलीन हो चुकी है, छोटी नदियाँ ज़मींदोज़ हो रही हैं, किसान आज दिहाड़ी मज़दूर बन गया है, रिवर साइड के लोग-बाग कटे तटबंधों को बाँधने नहीं दे रहे हैं, सिविल सोसाइटी राजनीति प्रेरित हो गई है, गेहूँ-चावल से मकई की तरफ़ किसानी का पैटर्न बदल चुका है, बाढ़ नियंत्रण व प्रबंधन के नाम में आपदा प्रबंधन की शुरुआत हो

[44] ग़ौरतलब है कि नवपरंपरावाद जिसकी नुमाइंदगी गॉडगिल व गुहा करते हैं, ने नवपरंपरावाद के अंतर्गत तीन बिंदुओं को रेखांकित किया है, क) राज्य की परंपरागत भूमिका की समीक्षा करते हुए उसके साथ सिविल सोसाइटी व संपूर्ण समाज के संबंधों को मज़बूत बनाने पर बल ख) नदी, तालाब, व बाढ़ संबंधी सामुदायिक समझ व नज़रिये को और मजबूत बनाना ग) विलुप्त हो रहे ज्ञान परंपराओं को फिर से जाग्रत करने पर बल (अग्रवाल व नारायण 1996).

[45] बिहार के बाढ़ प्रभावित इलाक़े में पोखर व तालाब संस्कृति का जाल बिछा हुआ था. 20 वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में बिहार में तालाबों की संख्या 50,000 से ज़्यादा थी और उसमें आधे से अधिक मानव निर्मित थे. पोखर-तालाब के कारण ही मिथिलांचल-सीमांचल में *पग पग पोखर पान मखान* कहावत बहुत लोकप्रिय है. विस्तार से देखें झा (2016).

[46] रिविजिटिंग महानंदा बेसिन के दौरान हमने पाया कि महानंदा नदी की बहुत सारी सहायक छोटी नदियाँ विलुप्त हो चुकी हैं. वहीं बहुत सारी इसके कगार पर हैं.

[47] बिहार में बाढ़ प्रभावित इलाक़ों में जब तटबंध और बाँध नहीं बने थे तब वहाँ के लोकजीवन में ज़नेर खेलना और ज़नेर गीत के गाने का खासा महत्त्व था. ज़नेर लोगों के बीच लोक-साहचर्य, सामाजिक पूँजी और सामुदायिक सहभागिता का अद्भुत रूपक के तौर पर स्थापित था. कोसी, कमला-बलान, बागमती और महानंदा के इलाक़े में ज़नेर की प्रथा को स्थानीय ज़ुबान में झिंझिर, झझेर, कस्तीखोरी या कस्तीबाज़ी भी कहा जाता था.

[48] फ़ील्डवर्क के दौरान की गई विस्तृत बातचीत से यह ज्ञात हुआ है आपदा प्रबंधन नीति के संदर्भ में अभी भी स्थानीय ग्रामीण लोग-बाग को विशेष पता नहीं है. ऐसे में जागरूकता के अभाव में इसमें जनसहभागिता का साफ़ अभाव देखा जा सकता है.

चुकी है जिसका अब तक का निष्पादन बहुत उत्साहवर्धक नहीं रहा है। समग्र रूप से, राज्य क्राइसिस ऑफ़ गर्वनैबिलिटी के संकट से गुज़र रहा है। ऐसे में निश्चित तौर पर उपरोक्त दोनों प्रकार के नज़रिये या ज्ञानमीमांसा का उचित तालमेल करते हुए एक वैकल्पिक बाढ़ प्रबंधन की नीति की अदद आवश्यकता है जिसपर राज्य को गंभीरतापूर्वक पहल करनी चाहिए।

संदर्भ

अनुपम मिश्र (1995), *आज भी खरे हैं तालाब*, गाँधी शांति प्रतिष्ठान, नई दिल्ली.

________ (2008), 'तैरने वाला समाज आज डूब रहा है', *सामयिक वार्ता*, नई दिल्ली.

आशिस नंदी (1988), *साइंस, हेजेमनी ऐंड वायलेंस, अ रेक्विअम् फ़ॉर मॉडनिर्टी,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

________ (2012), *द रोमांस ऑफ़ द स्टेट, ऐंड द फेट ऑफ़ डिसेंट इन द ट्रॉपिक्स*, ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

इम्तियाज़ अहमद (1999), 'गवर्नेंस ऐंड फ़्लड्स', *सेमिनार,* 478.

इलीनर ओक्ट्रम (1990), *गवर्निंग द कॉमंस द इवोल्यूशन ऑफ़ इंस्टिट्यूशन फ़ॉर कलेक्टिव ऐक्शन, केम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस*, केम्ब्रिज.

ओ'मैली, एन.एस.एस (1911), *बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स पूर्णिया*, कलकत्ता, बंगाल सेक्टिरेटियेट बुक डिपोट.

गैरेट हार्डिन (1968), 'द ट्रेजेडी ऑफ़ कॉमन्स', *साइंस*, 162 :1243-8.

जी हार्डिन (1977), 'द ट्रैज़ड्री ऑफ़ कॉमन्स', *साइंस*, सैनफ्रांसिस्को.

जयंत बंद्योपाध्याय (1999), 'नीड फ़ॉर रियलिस्टिक ब्यू', *सेमिनार*, 478.

दिनेश कुमार मिश्र (1994), *बंदिनी महानंदा*, समता प्रकाशन, पटना.

________(1999), 'फ्लड प्रोजेक्शन दैज नेवर वाज़ : केस ऑफ़ महानंदा बेसिन ऑफ़ नार्थ बिहार' *इकनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खंड 34, अंक 29.

________(1999), 'द ऐबेंकमेंट ट्रैप', *सेमिनार* 478.

________(2000), *'बोया पेड़ बबूल का-बाढ़ नियंत्रण का रहस्य'*, पृथ्वी प्रकाशन, नई दिल्ली.

________(2001), 'लिविंग विद् फ्लड्स', *इकनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खंड 36, अंक 29.

________(2002), *'लिविंग विद् द पॉलिटिक्स ऑफ़ फ्लड्स',* पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट, देहरादून.

________(2003), नूज़ अराउंड द महानंदा, पटना लोकवाणी प्रिंटिंग प्रेस.

________(2005), *बगावत पे मजबूर मिथिला की कमला नदी*, बाढ़ मुक्ति अभियान, पटना.

________(2006), *दुई पाटन के बीच में – कोसी नदी की कहानी*, पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट, देहरादून.

________(2008), *ट्रैपर्ड बिटवीन द डेविल ऐंड द डिप सी – स्टोरी ऑफ़ द कोसी रिवर,* पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट', देहरादून.

________(2009), 'द इनएविटेबल हैज़ हैपेन्ड', *इकनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खंड 43, क्रम 36.

________(2009), 'आपदा प्रबंधन, आवश्यकता एवं पुनर्मूल्यांकन', जून, इंडिया वाटर पोर्टल. उपलब्ध है लिंक https://hindi.indiawaterportal.org/content/apadaa-parabanadhana-avasayakataa-evan-pauna-ramauulayaankana/content-type-page/48988.

पंकज कुमार झा (2010), *सुशासन के आईने में नया बिहार*, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली.

________(2014), 'ज़नेर के गीत', दुनिया मेरे आगे, *जनसत्ता*, नई दिल्ली.

________(2015), 'ऐ बबनी कैसे रोपब गरमा के धान', कुछ अलग, *प्रभात ख़बर* , पटना.

________(2015) 'बिहार एसेंबली पोल 2015 : सीमांचल्स बिगेस्ट इश्यू नोव्हेयर इट्स फोकस', उपलब्ध है, http://indiatoday.intoday.in/story/bihar-assembly-polls-2015-seemanchals-biggest-issue-is-nowhere-its-focus/1/514811.html.

________(2015), 'द वे अहेड फ़ॉर न्यू बिहार ऐंड इट्स चैलेंज', उपलब्ध है http://indiatoday.intoday.in/story/the-way-ahead-for-new-bihar-and-its-challenges/1/521097.html.

________(2015), 'बाढ़ और बदहाली', *सबलोग*, दिल्ली.

________(2015), *राज्य और बाढ़ नियंत्रण की राजनीति : बिहार के कटिहार ज़िला के विशेष संदर्भ में*, पीएचडी शोध (अप्रकाशित), राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय.

________(2016), 'बाढ़ के रूप अनेक', कुछ अलग, *प्रभात ख़बर*, राँची-पटना.

________(2018), 'चैलेन्जेज ऑफ़ डिजास्टर मैनेजमेंट ऐक्ट 2005 विद स्पेशल रेफरेंसेज़ ऑफ़ फ्लड कंट्रोल नीड फ़ॉर एन अल्टरनेटिव डिजास्टर मैनेजमेंट पॉलिसी', *डॉयलॉग जर्नल*, ए जर्नल ऑफ़ आस्था भारती, दिल्ली.

________(प्रकाशनाधीन).

पी.सी. रॉयचौधरी (1963), *बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स*, पूर्णिया.

फणीश्वर नाथ रेणु (1984), *मैला आँचल*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.

________(1977), *ऋणजल-धनजल*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.

फ्रांसिस बुकानन (1928) 'एन अकाउंट ऑफ़ द ड्रिस्ट्रिक्ट ऑफ़ पूर्णिया, 1809-10', सुपरिंटेंडेंट रिपोर्ट, गवर्निंग प्रिंटिंग प्रेस, बिहार ऐंड ओडीशा.

फिलिप बी. विलियम्स (1999), 'फ्लड कंट्रोल वर्सेज़ फ्लड मैनेजमेंट', *सेमिनार,* 472.

मणीन्द्र ठाकुर (2017), 'महानंदा पर तटबंध से तबाही', *प्रभात ख़बर,* झारखंड-बिहार संस्करण, 5 अक्टूबर.

रॉबर्ट चेंबर (1997), *वुज रियल्टी काउंट्स : पुटिंग द फ़र्स्ट* लास्ट, इंटरमीडिएट टेक्नालॉजी पब्लिकेशन, लंदन.

रामास्वामी.आर अय्यर (2003), *वाटर : पर्सपेक्टिव, इश्यूज़., कंसर्न*, सेज़ इंडिया पब्लिकेशन.

रोहन डि'सूज़ा (1999), 'फ्लड्स', द प्राब्लम, *सेमिनार,* 478.

________(2006), *ड्रॉउंड ऐंड डैम्ड : कोलोनियल कैपिटलिज़म ऐंड फ़्लड कंट्रोल इन ईस्टर्न इंडिया (1803-1946),* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

वंदना शिवा (2004) *वाटर्स वार : प्राइवेटाइजेशन, पॉल्युशन, प्रॉफ़िट*, नवदान्य फ़ाउंडेशन, नई दिल्ली.

विश्व बाँध आयोग पर नागरिक मार्गदर्शिका (2002), सैंड्रप, नई दिल्ली.

सत्यजीत सिंह (1997), *टेमिंग द वाटर : द पॉलिटिकल इकॉनॉमी ऑफ़ लार्ज डैम्स इन इंडिया,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

________ज्याँ द्रेज़ और मीरा सैमसन (1997), द *डैम ऐंड द नेशंस : डिस्प्लेसमेंट ऐंड रिसेटलमेंट इन नर्मदा वैली,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

________(2016), द *लोकल इन गवर्नेंस, पॉलिटिक्स, डिसेंट्रेलाइजेशन ऐंड एन्वायरमेंट,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

श्रीपद धर्माधिकारी (2005), *अनरेवलिंग भाखड़ा*, (अनु.) विनीत तिवारी, बुक्स फ़ॉर चेंज़, नई दिल्ली.

हवलदार त्रिपाठी (2003), *बिहार की नदियाँ ऐतिहासिक व सांस्कृतिक सर्वेक्षण*, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना.